वृन्दा

वर्ष 21, अंक-6, पत्रिका पंजीकरण संख्या MP HIN 2003/11939

जून: 2023

Red No M. P. HIN 2003/11939

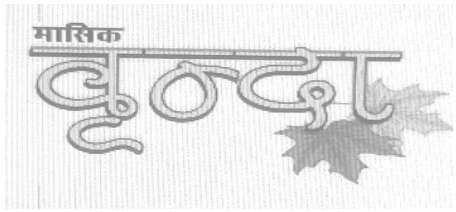

सम्पादन परामर्श
श्री सुधेंदु ओझा-07701960982
सम्पादक
अंजना छलोत्रे
-84 61912125
कार्यकारी सम्पादक
आशा शैली- 7055336168
सम्पादकीय कार्यालय
जी-48, फारच्यून ग्लोरी, ई-8, एक्सटेंशन, भोपाल-462039
मो-9827034165

मुद्रक/प्रकाशक/स्वत्वाधिकारी सम्पादक -अंजना 'सवि'
जी-48, फारच्यून ग्लोरी, ई-8, एक्सटेंशन, भोपाल-462039
वृन्दा के सभी विवादों का वैधानिक क्षेत्र भोपाल रहेगा
लेखन सामग्री के लिए सम्पादक का सहमत होना आवश्यक नहीं।

मूल्य-एक प्रति 12/-,
वार्षिक 120/-,
संस्था और पुस्तकालय हेतु 120/- वार्षिक

इस अंक में

	विधा	लेखक	पृष्ठ
सम्पादकीय			
महान ऋषि-योद्धा के साथ.....		डॉ उमेश प्रताप वत्स	03
कहानी			
बेदखल जिन्दगी		श्रवण कुमार उर्मिलिया	06
लघुकथाएँ			
लघुकथाछोटे-बड़े		डॉ. दिनेश पाठक शशि	10
हक़दार		नीना सिन्हा	11
रॉन्ग नम्बर		राजेश पाठक	12
गीत		गिरेन्द्र सिह भदौरिया "प्राण"	13
ख़ामोश आँखें में		बलजीत सिह बेनाम	**13**
कविता			
ऐ खुशी सुल!		उदयवीर भारद्वाज	14
कलम मेरी कह रही है		वीरेंद्र शर्मा	14
दस्तक -कल्याणमय आनन्द			15
प्यार क्या है		-रॉबर्ट लुई स्टीवेंसन	
अनुवाद		डॉ. रूपचन्द शास्त्रत मयंक	15
मज़दूर औरत		राजकुमार जैन 'राजन'	16
पारस (धारावाहिक उपन्यास)		आशा शैली	17
फादर कामिल बुल्के		कुबेर दत्त	20
भिखारी का दर्द		-रमेश चन्द्र	22
परिधियों से परे		अंजना छलोत्रे 'सवि'	23
साहित्य, समाज और.....		श्यामल बिहारी महतो	27
आशा शैली के दोहों में...		श्रीती हीरा अन्ना	29

स्वामी, मुद्रक, प्रकाशक, तथा स्वत्वाधिकारी सम्पादक अंजना द्वारा वृन्दा के लिए खो प्रिंटर्स तलैया चौक से मुद्रित व जी-48, फारच्यून ग्लोरी, ई-8, एक्सटेंशन, भोपाल 462 039 से प्रकाशित।

सम्पादकीय

प्रिय पाठकों,

मैं इस अवसर पर आपके समर्थन और उत्साह के लिए तहे दिल से धन्यवाद देना चाहती हूँ। आपकी निष्ठा और प्रोत्साहन मेरे लिए प्रेरणा का निरंतर स्रोत रही है। आपके ओजस्वी शब्द और रचनात्मक प्रतिक्रिया अमूल्य हैं। आपका उत्साह और प्रतिबद्धता मेरी सफलता के पीछे प्रेरक शक्ति रही है, आपके निरंतर समर्थन और मेरी यात्रा का हिस्सा बने में आपका प्रोत्साहन और सकारात्मकता मेरे लिए शक्ति का स्रोत रही है। आपने मेरे काम को पढ़ने और प्रतिक्रिया देने के लिए जो समय दिया, मैं उसकी सराहना करती हूँ।

आपने मेरे जीवन में बहुत बड़ा बदलाव लाया है, एक लेखक के रूप में आगे बढ़ने और विकास करने में आपकी प्रतिक्रिया मेरे लिए अमूल्य रही है। मैं ऐसे अद्‌भुत और सहयोगी पाठकों की हृदय तल से आभारी हूँ। यह तथ्य कि आपने मेरे काम को पढ़ने, उस पर टिप्पणी करने और इसे दूसरों के साथ साझा करने के लिए समय निकाला यह मेरे लिए बहुत मायने रखता है। मेरी लेखन यात्रा को नई ऊँचाइयों तक पहुँचाने में मेरी मदद करने में आपका समर्थन और प्रशंसा अमूल्य रही है।

हमारे देश में पहला पठन दिवस समारोह 1996 में आयोजित किया गया था, केन्द्रीय माध्यमिक शिक्षा बोर्ड 19 जून, 2017 को, 22 वें राष्ट्रीय पठन माह समारोह का शुभारंभ किया और 2022 तक देश के सभी नागरिकों के बीच 'पढ़ो और बढ़ो' के संदेश को फैलाने के लिए एकता का आह्वान किया गया।

हमारा देश भारत इस वर्ष 19 जून को राष्ट्रीय पठन दिवस का 28 वां संस्करण मना रहा है। आपको यह जानकर हर्ष होगा कि यह दिन केरल में पुस्तकालय आंदोलन के जनक स्वर्गीय पुथुवायिल नारायण पणिक्कर के सम्मान में मनाया जा रहा है।

मैं आपकी प्रतिक्रिया, टिप्पणियों और सुझावों के लिए आभारी हूँ, क्योंकि उन्होंने मुझे अपना काम सुधारने और परिष्कृत करने में मदद की है। मेरे जीवन का बेहद महत्वपूर्ण हिस्सा बनने और आपके निरंतर समर्थन के लिए बहुत-बहुत धन्यवाद।

अंजना छलोत्रे 'सवि'

महान ऋषि-योद्धा के साथ समरसता के भी महान पुरोधा थे भगवान परशुराम

डॉ. उमेश प्रताप वत्स

हिंदू पंचांग के अनुसार हर साल वैशाख माह के शुक्ल पक्ष की तृतीया तिथि पर भगवान परशुराम का जन्मोत्सव बड़े ही धूमधाम के साथ मनाया जाता है। भगवान परशुराम महर्षि जमदग्नि और रेणुका की संतान हैं जो कि भगवान विष्णु के सभी दस अवतारों में छठे अवतार माने गए हैं।

परशुराम अहिंसा की रक्षा करने के लिए शस्त्र उठाने के पक्ष में थे किन्तु ऋषि जमदग्नि अस्त्र-शस्त्र उठाना गलत मानते थे। जिस कारण परशुराम जी कुछ समय के लिए आश्रम छोड़कर महेंद्र पर्वत पर चले गए। परशुराम जी की अनुपस्थिति का लाभ उठा कर राजा सहस्रार्जुन ने कुछ सैनिकों को ऋषि जमदग्नि की अद्भुत गाय सुशीला को लाने का आदेश दिया। आश्रम में पहुँचने पर ऋषि जमदग्नि ने उन्हें रोका और बहुत समझाने का प्रयास किया किन्तु वे दुष्ट नहीं माने तब सुशीला की रक्षा के लिए उन्होंने अस्त्र उठाया और सबको घायल करके भगा दिया। ऋषि ने पत्नी रेणुका को कहा कि परशुराम ठीक कहता है कि अंहिसा की रक्षा के लिए हिंसा भी करनी पड़ती है। हारे हुए सेनापति को देखकर सहस्रार्जुन बौखला गया और बड़ी सेना लेकर आश्रम पर धावा बोल दिया। ऋषि व अन्य शिष्यों ने आत्म रक्षा व सुशीला की रक्षा के लिए उनका मुकाबला किया किन्तु अधिक सेना होने के कारण वे लाचार होने लगे तब ऋषि ने गौ माता के समक्ष हाथ जोड़कर विनती की कि माता मुझे क्षमा करना मैं आपकी रक्षा न कर सका, अब आप अपनी रक्षा स्वयं करें। गौ माता के चमत्कार से हजारों सैनिक प्रकट हुए और सहस्रार्जुन की सेना को नष्ट करने लगे तब धोखे से ऋषि को ढाल बनाकर सहस्रार्जुन गाय सुशीला को खोलकर ले गया। इधर परशुराम जी गुस्सा शांत होने पर आश्रम वापस आए तो घायल पिता व शिष्यों को देखकर सारी जानकारी ले सुशीला को वापस लाने सहस्रार्जुन के राज में गये जहाँ राजा के चारों बेटे सुशीला का अपमान कर रहे थे। बेटों को चेतावनी देकर परशुराम सुशीला को आश्रम ले आये किन्तु सहस्रार्जुन के चारों पुत्रों ने परशुराम जी से पहले आश्रम पहुँचकर घायल ऋषि जमदग्नि का वध कर दिया। जब परशुराम जी ऋषि कक्ष में पहुँचे तो माता रेणुका मृत पति के समक्ष छाती पीट रही थी। माता को शांत करते हुए परशुराम ने प्रतिज्ञा की कि हे माता! तुमने मेरे मृत पति के समक्ष इक्कीस बार छाती पीटी है, मैं संकल्प लेता हूँ कि कायर, अत्याचारी सहस्रार्जुन के वंश को इक्कीस बार ही समाप्त करूँगा और जो उसकी सहायता के लिए आयेगा उसको भी यमलोक पहुँचाकर ही आपके समक्ष आऊँगा। तब परशुराम ने सहस्राबाहू वाले सहस्रार्जुन को उसके वंश सहित नष्ट किया तथा देने वाले पापी राजाओं को इक्कीस बार यमलोक पहुँचाकर अपनी प्रतिज्ञा पूर्ण की। किन्तु यह परशुराम जी का महान योद्धा वाला एक पक्ष है।

परशुराम जिन्हें नारायण का अवतार माना गया है। माता-पिता के अतुलनीय भक्त होने के साथ ही वे महान ज्ञानी भी थे। भगवान परशुराम के लिए कहा जाता है कि वह अपने माता-पिता की सभी बातों का अक्षरशः पालन करते थे, एक बार अपने

पिता के कहने पर उन्होंने अपनी माता का सिर धड़ से अलग कर दिया था, जिसका बाद में उन्हें बहुत पश्चाताप भी हुआ। वहीं दूसरी ओर श्रवण कुमार जिन्हें याद ही उनकी माता-पिता की सेवा के लिए किया जाता है।

'मातृ पितृ देवो भवः' अर्थात् माता पिता देवता के सामान है। श्रवण कुमार जिन्होंने अपने अंधे माँ-बाप की पूरे जीवन सेवा की और अंत में अपने कंधों पर दोनों को बैठाकर तीर्थयात्रा पर निकल गए। एक बार जब वे अपने माता-पिता को लेकर जंगल से जा रहे थे। माता-पिता को प्यास लगने पर वे निकट ही एक सरोवर से जल भरने लगे तभी वहाँ भगवान परशुराम भी आ गए और श्रवण कुमार से बोले ''हे बालक! मैं बहुत प्यासा हूँ, कृपा करके मुझे पानी पिला दो''

श्रवण कुमार आश्चर्य से परशुराम को देखने लगे। श्रवण कुमार ने परशुराम से कहा कि आप वेशभूषा से तो मुनिवर लगते हो किन्तु आपके हाथों में कुठार व धनुष मुझे उलझन में डाल रहे हैं पर आप जो कोई भी हो उच्च कुल के लगते हैं, इसके बाद परशुराम श्रवण कुमार से कहते हैं कि ''मेरे कर्मो को जाने बिना ही केवल मुझे देखकर उच्च कुल का सिद्ध कर दिया। क्या कारण है?''

श्रवण कहने लगे कि ''आप जरूर ही किसी ऋषि के पुत्र होंगे लेकिन मैं ठहरा एक छोटी जाति की माता का पुत्र। आपको पानी नहीं पिला सकता।'' श्रवण की इन बातों को सुन परशुराम क्रोधित हो उठे बोले, ''बालक माँ कभी छोटी जाति की नहीं होती, माँ तो माँ होती है। कर्मों से व्यक्ति की असली पहचान होती है छोटी जाती उच्च कुल ऐसा कुछ नहीं होता।

''जन्मना जायते शूद्रः
कर्मणा द्विज उच्यते''।

अर्थात् जन्म से सभी शूद्र होते हैं और कर्म से ही वे ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य और शूद्र बनते हैं।

वर्तमान दौर में 'मनुवाद' शब्द को नकारात्मक अर्थों में लिया जा रहा है। ब्राह्मणवाद को भी मनुवाद के ही पर्यायवाची के रूप में उपयोग किया जाता है। जबकि शास्त्रों में कहीं भी ऐसा वर्णन नहीं है।

ये समझाने के बाद परशुराम ने फिर श्रवण कुमार से पानी पिलाने का आग्रह किया, तो श्रवण कुमार ने उन्हें बहुत ही प्यार से पानी पिलाया।

जब श्रवण कुमार ने परशुराम से उनका परिचय माँगा तब श्रवण कुमार को पता चला कि यह तो भगवान परशुराम हैं जिनके दर्शन आज उसे हुए हैं। वह स्वयं को बहुत ही भाग्यशाली समझने लगा। इसके बाद श्रवण कुमार ने बताया कि वह अपने माता-पिता को लेकर तीर्थ यात्रा पर निकला है। तब परशुराम ने कहा, कि मुझे यहाँ कोई रथ या किसी तरह का कोई अन्य वाहन दिखाई नहीं दे रहा है फिर कैसे तीर्थ यात्रा पर जा रहे हो। इस पर श्रवण कुमार ने बताया कि मैं बहुत साधारण परिवार से हूँ मेरे पास रथ आदि की कोई व्यवस्था नहीं है किन्तु माता-पिता की आज्ञा का पालन करना मेरा धर्म है। इसी धर्म की पालना करने के लिए मैं कंधे पर ही अपने माता-पिता को पालकी में उठाकर पैदल ही तीर्थयात्रा कराने के लिए निकल पड़ा हूँ।

श्रवण की इन बातों को सुन परशुराम भावुक हो उठे ओर उनसे अपने माता-पिता से मिलाने का आग्रह कर बोले मैं उन माता-पिता के चरण स्पर्श करना चाहूँगा जिन्होंने तुम जैसी संतान को जन्म दिया है। भगवान परशुराम ने श्रवण के माता-पिता के चरण स्पर्श किए। श्रवण के माता पिता को जब ज्ञात हुआ कि स्वयं भगवान परशुराम आये हैं। वे अत्यन्त गद-गद हुए। भगवान परशुराम ने श्रवण कुमार को आशीर्वाद दिया कि तुम्हारी यात्रा मंगलमय हो। उन्होंने कहा कि जब तक यह संसार रहेगा श्रवण तुम्हारा नाम माता-पिता के भक्त बेटे के रूप में श्रद्धा से लिया जायेगा।

वास्तव में परशुराम जी महान ऋषि जमदग्नि और रेणुका जी के पुत्र, महान ज्ञानी, महान योद्धा और सभी वर्णों में उत्पन्न होने वाले सामान्य व्यक्तियों

को भी एक-सा सम्मान देते थे जिस कारण उन्हें भगवान परशुराम कहा जाता है।

माना जाता है कि भगवान परशुराम आज भी इस धरती पर जीवित विचरण कर रहे हैं। हमारे शास्त्रों में अष्टचिरंजीवियों का वर्णन कुछ इस तरह से मिलता है।

अश्वत्थामा बलिव्यासो हनूमांश्च विभीषणः
प: परशुरामश्च सप्तएतै चिरजीविनः।
सप्तैतान् संस्मरेन्नित्यं मार्कण्डेयमथाष्टमम्
जीवेद्वर्षशतं सोपि सर्वव्याधिविवर्जित।।

अर्थातः आठ चिरंजीवियों में भगवान परशुराम समेत महर्षि वेदव्यास, अश्वत्थामा, राजा बलि, हनुमान, विभीषण, कृपाचार्य और ऋषि मार्कंडेय हैं जो आज भी इस कलयुग में विचरण कर रहे हैं।

राजा बलि- भक्त प्रहलाद के वंशज हैं। भगवान विष्णु के भक्त राजा बलि भगवान वामन को अपना सबकुछ दान कर महादानी के रूप में प्रसिद्ध हुए। इनकी दानशीलता से प्रसन्न होकर भगवान विष्णु ने इनका द्वारपाल बनना स्वीकार किया था।

अक्षय तृतीया के दिन जन्म लेने के कारण ही भगवान परशुराम की शक्ति भी अक्षय थी। परशुरामजी ने पृथ्वी से 21 बार अधर्मी क्षत्रियों का अंत किया गया था।

त्रेता युग में श्रीराम के परम भक्त हनुमानजी को माता सीता ने अजर-अमर होने का वरदान दिया था। इसी वजह से हनुमानजी भी चिरंजीवी माने जाते हैं।

विभीषण- रावण के छोटे भाई और श्रीराम के भक्त विभीषण भी चिरंजीवी हैं। वेद व्यास, चारों वेदों ऋग्वेद, अथर्ववेद, सामवेद और यजुर्वेद का संपादन और 18 पुराणों के रचनाकार हैं। गुरु द्रोणाचार्य का पुत्र अश्वथामा भी चिरंजीवी है। शास्त्रों में अश्वत्थामा को भी अमर बताया गया है।

महाभारत काल में युद्ध नीति में कुशल होने के साथ ही परम तपस्वी ऋषि हैं। कृपाचार्य कौरवों और पांडवों के गुरु थे। भगवान शिव के परमभक्त ऋषि मार्कंडेय अल्पायु थे, लेकिन उन्होंने महामृत्युंजय मंत्र सिद्ध किया और वे चिरंजीवी बन गए।

पौराणिक मान्यताओं के अनुसार भगवान परशुराम ने श्रीकृष्ण को सुदर्शन चक्र दिया था। दरअसर गुरुकुल में शिक्षा ग्रहण के दौरान भगवान कृष्ण की मुलाकात परशुराम जी से हुई तभी उन्होंने भगवान कृष्ण को सुदर्शन चक्र दिया था।

भगवान परशुराम का जन्म माता रेणुका की कोख से हुआ था। जन्म के बाद इनके माता-पिता ने इनका नाम राम रखा था। बालक राम बचपन से ही भगवान शिव के परम भक्त थे। ये हमेशा ही भगवान की तपस्या में लीन रहा करते थे। तब भगवान शिव ने इनकी तपस्या से प्रसन्न होकर इन्हें कई तरह के शस्त्र दिए थे जिसमें एक फरसा भी था। फरसा को परशु भी कहते हैं इस कारण से इनका नाम परशुराम पड़ा।

परशुराम जी का जन्म ब्राह्मण कुल में हुआ था। उनका यह अवतार बहुत ही तीव्र, प्रचंड और क्रोधी स्वाभाव का था। भगवान परशुराम ने अपने माता-पिता के अपमान का बदला लेने के लिए इस पृथ्वी को इक्कीस बार अत्याचारी क्षत्रियों का संहार किया था। लेकिन वध करने के बाद पिता से वरदान प्राप्त करके फिर से माता को जीवित कर दिया था।

भगवान परशुराम जी के महान ज्ञानी , अवतारी होने के बाद भी भक्त श्रवण कुमार के साथ किया गया संवाद यह प्रेरणा देता है कि को भी जीव छोटा-बड़ा नहीं है। जीव को उसके कर्म छोटा-बड़ा बनाते हैं। अतः हमें सबके साथ एक-सा व्यवहार करना चाहिए तभी भगवान परशुराम जी के जन्मोत्सव का उद्देश्य पूर्ण हो पायेगा।

14 शिवदयाल पुरी, निकट आइटीआइ
यमुनानगर, हरियाणा - 135001
9416966424
umeshpvats@gmail-com

बेदख़ल ज़िंदगी

श्रवण कुमार उर्मलिया

घरमालिक कितना भी बूढ़ा हो जाय फिर भी वह कानूनन घरमालिक ही रहता है। बच्चों को पढ़ाने-लिखाने के बाद अपनी जीवन भर की बची पूंजी द्वारा बनवाये हुए घर के एक अवांछित कोने में जर्जर बेड और महकते बिस्तर पर पड़े हुए दादाजी अक्सर यह बात सोचते रहते हैं।

उनको अब भी लगता है कि इस घर के बारे में सारे फ़ैसले लेने का हक़ उन्हें ही है। पर उनके दोनों बेटों और दोनों बहुओं की सोच दादाजी की सोच से इतर है। वे दादाजी के अधिकारों पर जब-तब अतिक्रमण करते रहते हैं।

जब तक दादाजी कुत्ते को घुमा लाते थे, बच्चों को स्कूल छोड़ आते थे, घर के लिए दूध-ब्रेड-बटर, सब्जी-भाजी, राशन-पानी इत्यादि ले आते थे, घर में उनका एक वजूद हुआ करता था। बहुएँ उन्हें नाश्ता-पानी, खाना-पीना इत्यादि समय पर देती रहती थीं।

बुढ़ापे में शरीर साथ छोड़ देता है पर सांसें चलती रहती हैं। दादाजी अशक्त हो गए हैं और अब घर वालों के लिए रद्दी अख़बार-से हो गए हैं। वे थोड़ा-बहुत टहल लेते हैं और आकर फिर अपने बिस्तर पर लेट जाते हैं।

हारे को हरिनाम। वे कभी गीता बांचते हैं तो कभी रामायण। टी.वी. देखने का मन होता है तो वे बैठक में आ जाते हैं। बड़े शौक़ से उन्होंने इतनी शानदार बैठक बनवाई थी। वे हसरत भरी नज़रों से अपनी बैठक को निहारते हैं।

वे बैठक में ठीक से बैठ भी नहीं पाते कि बहुएं उन्हें बैठक में देखते ही भुनभुनाने लगती हैं जैसे दादाजी की जगह को बाहरी आदमी घर में घुस आया हो।

उन्हें छोटी बहू टोक देती है, ''बाबूजी, अभी बच्चे कार्टून देख रहे हैं। एक घंटे बाद उनकी ऑनलाइन क्लासेज़ शुरू होंगी। बच्चे डिस्टर्ब होंगे, इसलिए आप जाकर बिस्तर पर लेटिये।"

दादाजी व्यथित होकर सोचने लगते हैं कि वे अपने ही घर में निष्काषित हैं। वे समझ जाते हैं कि उनका जीवन अब सिर्फ़ उनका रह गया हैं, घर के अन्य सदस्यों के लिए वे बची-खुची सांसों और हाड़-मांस का कबाड़ भर हैं।

बेटों के पास अपनी बीबी-बच्चों के लिए ही समय नहीं है तो बूढ़े बाप के लिए तो समय देने का सवाल ही नहीं उठता। गनीमत है कि उन पर तरस खाकर बहुएँ खाने के नाम पर कुछ पेट भरने लायक दे जाती हैं तो वे अपनी सांसों को किसी तरह जिंदा रखे हुए हैं।

जब तक वे दूध लाते थे तो उन्हें भी दूध मिल जाता था। सब्जी-भाजी लाते थे तो स्वादिष्ट और पौष्टिक भोजन मिलता था। घर वालों ने शायद सुभाष बाबू की बात को गांठ बांध लिया है-'तुम मुझे खून दो मैं तुम्हें आज़ादी दूंगा।'

अब दादाजी अपने बच्चों को कैसे समझाएँ कि सुभाष बाबू ने यह तो नहीं कहा था कि जो खून नहीं देगा उसे आज़ादी नहीं मिलेगी। पोते-पोती कभी कभार उनके पास आ जाते हैं तो उनका मन लग जाता है।

दुनिया छोड़ते समय हर बुजुर्ग ज़रूर सोचता होगा कि वह अपने बाद एक भरापूरा परिवार छोड़े

जा रहा है। यह बात कही न कहीं एक सुकून देती होगी। पर दादाजी सोचते हैं कि उन्हें ऐसे बेटे-बहुओं को छोड़कर जाना होगा जिन्होंने उन्हें पहले ही छोड़ दिया है।

अब उनका सारा सुकून, उनकी सारी आशाएँ अपने पोते-पोतियों पर ही टिकी हुई हैं। एक प्रकार से वही अब उनके जीने के मकसद को सम्हाले हुए हैं। एक वही तो हैं जो उनके साथ होकर खुशी महसूस करते हैं और अपनी बालसुलभ जिज्ञासाओं से उनका मन लगाए रखते हैं।

पर उनका अपने पोते-पोतियों के साथ होना भी बहुओं को चुभता है। वे उन पर नज़र रखती हैं और पोते-पोतियों को उनके साथ देखते ही उन्हें पढ़ाई का वास्ता देकर अपने दादाजी से दूर कर देती हैं।

एक बार बच्चों ने मिलकर स्नेह से अपने दादाजी को अपनी चॉकलेट खिला दी थी तो बहुओं ने बड़ा बवाल मचाया था। उन्होंने यहाँ तक कह दिया था, ''कैसा लालची बूढ़ा है, बच्चों की चॉकलेट तक छीनकर खा जाता है।''

सिर्फ़ घर का पालतू कुत्ता दादाजी का दर्द समझता है और चौबीसो घंटे उनके साथ रहता है। एक वही है जो शायद सच्चे मन से दादाजी को घरमालिक समझता है। तभी तो उनकी सारी बातें मानता है।

दादाजी का अस्तित्व एक प्रकार से घर की लाइन ऑफ कंट्रोल पर रखा हुआ है। लाइन ऑफ कंट्रोल के इस ओर वही घर है जिसे दादाजी ने बनवाया था और उस ओर घर का बाहर है।

सिर्फ़ उनकी पेंशन है जो उन्हें लाइन ऑफ कंट्रोल के इस ओर रोके हुए है वरना उन्हें कब का दर-ब-दर कर दिया गया होता।

पेंशन का महत्व अब समझ में आता है। जब बाक़ी सब परस्वार्थ के रिश्ते अर्थहीन हो जाते हैं तब पेंशन रूपी अंतिम स्वार्थ का रिश्ता बच रहता है जो 'राम नाम सत्य है' से पहले तक प्रभावी रहता है।

उनकी बेटी जब भी आती है, हर बार मनुहार करती है कि पापा, मेरे साथ चलो। हमारे साथ आराम से रहना। पर वे चाहकर भी नहीं जा पाते हैं।

जैसे ही वे बेटी के साथ जाने का नाम लेते हैं, उनपर बहुओं का प्यार उमड़ने लगता है। बहुएँ उन्हें मनुहार से रोक लेती हैं क्योंकि वे नहीं चाहतीं कि ननद दादाजी के पेंशन पर ऐश करे।

बेटे-बहुओं को उनके पेंशन की लालच तो है पर उनको उसकी ज़रूरत नहीं है। पर भाभियाँ यदि ननद के सुख को पचा लें तो यह रिश्तों की आचार संहिता के ख़िलाफ़ होगा।

इसके अलावा थोड़ा लोकलाज का भय भी है बेटे-बहुओं को, वर्ना दादाजी कब का तड़ीपार कर दिए गए होते। वे बिना झिझक उनका दावा करने वाली उनकी बेटी को मुफ़्त में सौंप दिए गए होते।

मुहल्ले में कई काबिल संतानें अपने माँ-बाप को ले जाकर वृद्धाश्रम में पटक आई हैं। दादाजी के बेटों ने भी शहर के सारे ओल्ड एज होम का सर्वे किया था पर मध्यम आय वर्ग और निम्न मध्यम आय वर्ग के सारे वृद्धाश्रम भर चुके थे।

कहीं भी वैकेंसी नहीं थी। हाँ, वी.आ .पी. ओल्ड एज होम बचे थे लेकिन बेटे और बहुएँ अपने 'यूज़ एंड थ्रो' बाप को इतना मंहगा ऐश्वर्य नहीं देना चाहते थे।

इसलिए बेटे-बहुएँ दादाजी की उपस्थिति को उन्हीं के द्वारा बनवाये घर में झेल रहे हैं। हाँ, बेटे और बहुएँ इस बात पर एकमत ज़रूर हैं कि दादाजी की काया को निष्काषन देने से घर की सारी समस्याएँ सुलझ जाएंगी।

अपनी सांसों और अपने घर से जुड़ा हुआ बूढ़ा घरवालों की नज़र में खटकने लगता है। बड़ी बहू कहती, ''बुढ़ऊ न जाने कब तक ऐसे ही कुंडली मारे बैठा रहेगा ! परेशान करके रख दिया।''

छोटी बहू बोलती, ''बहुत मज़बूत हड्डी है, दीदी। बुढ़ऊ अभी कहीं नहीं जाने वाला। अभी कई साल तक हमारी छाती पर मूंग दलेगा।"

बहुएँ जब अपने ससुर को खाना पहुँचाने आतीं तो उनकी नज़रों में दादाजी को स्पष्ट रूप से यह प्रश्न लिखा हुआ दिख जाता-''कब मरेगा रे, कालजयी बुड्ढे? कब होगा तेरा राम नाम सत्य??"

इधर एक-दो दिन से दादाजी को सामान्य सर्दी-खांसी हो रही है। दादाजी दवाएँ नहीं खा पा रहे हैं क्योंकि को दवा लाये तब न वे खाएँ। घर में सब अपने अपने कामों में व्यस्त हैं।

खांसी बढ़ती ही जा रही है। उन्हें सांस लेने में भी तकलीफ़ हो रही है। वे थोड़ा दहशत से भर जाते हैं। चारों तरफ़ कोरोना-महामारी का आपातकाल लगा हुआ है।

दिनभर टी.वी. पर एंकर चीख़-चीख कर कहता रहता है-'शहर में कोरोना पैर पसारता जा रहा है। इसलिए अपने आसपास देखिए, को कोरोना के सिम्पटम वाला मरीज तो नहीं है? हो तो जल्दी से इन नंबरों पर सूचित कीजिये।'

बहुओं की कुटिल बुद्धि में रोशनी की संभावना दिखने लगी है। जैसे-जैसे दादाजी की खांसने की गति बढ़ रही है वैसे वैसे उनकी आशा और बलवती होती जा रही है।

एक दिन बड़े बेटे ने कहा, ''बाबूजी को कुछ ज्यादा ही खांसी आ रही है। रात भर खाँसतें हैं तो नींद में ख़लल पड़ता है। आज मैं कुछ दवा ला देता हूँ ? या कोरोना की मेडिसिन-किट ला देता हूँ?"

पत्नी अपने पति को डांट देती है, ''खबरदार! मेरी मानो तो एक दो रातों की नींद को डिस्टर्ब हो जाने दो। बाद में हम गहरी नींद सो पाएंगे।"

पति बेचारा 'त्रिया चरित्रम' को कैसे समझे? औरतों का दिमाग़ पढ़ना क्या इतना ही आसान है। उधर सरकार कोरोना की रोकथाम के लिए कटिबद्ध है। घर-घर प्रतिनिधि भेजकर पता लगाया जा रहा है कि घरों में कोई कोरोना का मरीज तो नहीं है।

इनके घर प्रतिनिधि आता है तो बेटा मना करते हुए कहता है, ''हमारे घर में कोई कोरोना का मरीज नहीं है।"

पीछे से पत्नी अपने पति को परे धकेलते हुए कहती है, ''अरे, तुम परे हटो न? हाँ, भाई साहब, हमारे ससुर जी को बुखार भी है, खांसी भी आ रही है और सांस लेने में तकलीफ़ भी हो रही है।"

बेटा पत्नी को धीरे से कहता है, ''अरी भाग्यवान, बाबू जी को साधारण खांसी-सर्दी है। वे जल्दी ही ठीक हो जाएंगे।"

पत्नी फ़िर से पति को डांट देती है, ''तुम चुप रहो जी! तुम्हें अंदाज़ ही नहीं है कि कोरोना कितनी ख़तरनाक बीमारी है।"

सरकार का प्रतिनिधि पति-पत्नी को संबोधित करते हुए हिदायत देता है, ''आप उन्हें अलग कमरे में रखिये और कोई उनसे न मिले, इसका खास ध्यान रखिये। हम लोग कल टेस्ट-सैम्पल लेने आएंगे।"

बहू कहती है, ''न, न, भाई साहब! हम कोई रिस्क नहीं लेना चाहते हैं। घर में छोटे-छोटे बच्चे हैं, वे अपने दादा से मिले बिना नहीं रह सकते। फिर हम सब भी हैं। नहीं, उन्हें आप सरकारी क्वा. क्वारंटाइन-सेंटर में ले जाइए। कहिए तो हम अपनी गाड़ी से छोड़ आएंगे।"

प्रतिनिधि थोड़ा नानुकुर करने लगता है तो बहू भीतर से लाकर कुछ रुपये चुपके से उसकी मुट्ठी में पकड़ाती है। इस तरह स्वार्थी और दुनियादार बहू और अपने ससुर अर्थात दादाजी का घर से निष्काषन पक्का कर लेती है।

बेटा अपने पिता को सरकारी क्वारंटाइन-सेंटर ले जाने लगता है तो वे बिना हील-हुज्जत के तैयार हो जाते हैं। वे सोचते हैं कि जब मरना ही है तो क्या घर और क्या क्वारंटाइन- सेंटर।

घर के सब लोग उन्हें उनके अपने ही घर से विदा करने को उपस्थित थे। दादाजी ने सबको देखा और आशीर्वाद दिया।

बड़ी बहू बोली, ''चिंता न करें, बाबूजी, हम जल्दी आपको वापस ले आएँगे। वहाँ आपकी अच्छी तरह से देखभाल होगी और आप जल्दी से ठीक हो जाएँगे।''

दादाजी पोते पोतियों को प्यार करना चाहते थे पर बहुओं ने बच्चों को दादाजी के पास जाने ही नहीं दिया। दादाजी ने एक बार बड़ी हसरत से अपने घर को देखा और फ़िर गाड़ी में बैठकर कभी न लौटने के लिए क्वारंटाइन-सेंटर की ओर चल पड़े थे।

घर के सब लोग दादाजी को जाता हुआ देखकर अपने-अपने हाथ हिला रहे थे। बहुएँ मन ही मन खुश हो रही थीं कि बुड्ढा गया घर से। अब सब कुछ ठीक हो जाएगा।

बहुएँ मन ही मन प्रार्थना भी कर रही थीं कि हे भगवान, बस एक कृपा कीजिये कि यह बुड्ढा कभी घर न लौट पाए।

सिर्फ़ घर का कुत्ता व्यथित था और लगातार क्वारंटाइन-सेंटर तक उस गाड़ी का पीछा करता रहा था जिसमें दादाजी सवार थे।

19/207 शिवम खंड,
वसुंधरा, गाज़ियाबाद-201012
मोब. 9999903035

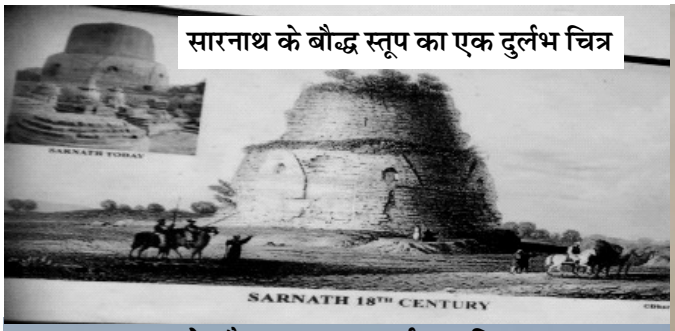

सारनाथ के बौद्ध स्तूप का एक दुर्लभ चित्र

सारनाथ के बौद्ध स्तूप का वर्तमान चित्र

सारनाथ बौद्ध संग्रहालय में रखे हमारे गौरव चिन्ह इस अशोक स्तम्भ के आतंकवादियों द्वारा चार टुकड़े तो किये गये परन्तु इनकी चमक न मिटाई जा सकी। वैज्ञानिक अभी तक अशोक स्तम्भ की पॉलिश के कैमिकल का मसला हल नहीं कर पाये। दो हज़ार 500 वर्ष पुरानी इन आकृतियों पर इतनी अधिक चमक सचमुच आश्चर्य चकित करती है।

सारनाथ या सारंगनाथ
बौद्ध संग्रहालय के सौजन्य से

शैलसूत्र की सम्पादक आशा शैली और कहानीकार राजेश्वरी जोशी

छोटे-बड़े

डॉ.दिनेश पाठक 'शशि'

हमें एक शादी में जाना था जहाँ बड़े भाईसाहब को भी सपरिवार आना था। भाभीजी अक्सर ही अपनी दो वर्षीया पुत्री गुड्डन की चंचलता, शरारत और चतुराई की बातें सुनाया करती थीं तो मेरी पत्नी भी अपने डेढ़ वर्ष के पुत्र बाबू की चपलता व चतुराई की बातें उन्हें फोन पर ही बता दिया करती।

दोनों बच्चों को एक-दूसरे के द्वारा पहली-पहली बार देखे जाने का मौका था ये। पत्नी ने अपने डेढ़ वर्षीय पुत्र को प्रशिक्षण देना प्रारम्भ कर दिया कि तुम्हें वहाँ जाकर अपनी दीदी की पिटाई कैसे करनी है उससे दबना नहीं है फिर देखना है कि दोनों में कौन बच्चा चंचल है।

नन्हा बालक भी अपनी बाल क्रीड़ावश दोनों हाथ उपर उठाकर एक्शन करता तो हम दोनों हँस पड़ते और पत्नी मन ही मन गर्व महसूस करने लगती।

विवाह-स्थल पर पहुँकर मेरी पत्नी ने अपने पुत्र से कहा -''बेटा, अपनी बहन से मिलो''

इतना सुनना था कि बच्चे ने उस बच्ची को ध क्का दिया और उसके उपर बैठ गया। देखने वाले सभी उसकी हरकत पर खिलखिलाकर हँस पड़े तो पत्नी विजय-गर्व से मुस्कराने लगी-''दीदी आप तो गुड्डन को बहुत ही चपल बताती थीं, ये तो.... .''

बच्ची को भयभीत होता देख भाभीजी भी सहम गईं तो भाईसाहब बोले-''अरे ये, बाबू तो वास्तव में ही बड़ा शैतान निकला, मैं तो टेलीफोन पर आप लोगों की बातें सुन-सुन कर सोचता था कि गुड्डन जैसा शरारती नहीं होगा। भाभीजी ने भी भाईसाहब का समर्थन करके अपनी झेंप मिटाई।

वैवाहिक कार्यक्रम की समाप्ति पर हम लोग वापस चलने की तैयारी करने लगे तो भाभीजी ने अपनी अटैची से निकाल कर एक बहुत ही सुन्दर सा खिलौना एवं एक शर्ट व जींस पत्नी को थमाते हुए कहा-''रश्मि, ये मैं बाबू के लिए, मेरठ से खरीद लाई थी, रख लो।''

भाभीजी द्वारा दिए गये कीमती सूट एवं खिलौने को देखकर हम पति-पत्नी सकपका गये। हमने तो इस बारे में सोचा तक नहीं था कि भाभीजी की दो वर्षीया बेटी भी तो हमें पहली बार ही मिलेगी। उसके लिए कुछ ले चलना चाहिए। हम तो रास्ते में भी गुड्डन की पिटाई अपने बाबू से कराने हेतु उसे प्रशिक्षित करते आये थे।

मुझे लगा कि बड़े, आखिर बड़े ही होते हैं। उनकी सोच और व्यवहार सब कुछ बड़ा ही होता है और छोटे, छोटे ही। भाभीजी और भाई साहब के अपनत्व के आगे अब हम अपने आप को बौना महसूस कर रहे थे।

28, सारंग विहार, मथुरा-281006
मोबा.09412727361 एवं 09760535755
ईमेल- drdinesh57@gmail.com

हकदार

नीना सिन्हा,

निवेदिता के घर, छोटी बहन रुक्मा की शादी के बाद की पहले होली मिलन का समारोह था। पूरा दिन हो-हंगामा, रंग-गुलाल, मालपुआ-गुझिया, दही-बड़ों में निकला। शाम को चाय का कप लिए तीनों भाई-बहन विमर्श को हॉल में और उनके जीवनसाथी कमरों में आराम करने चले गए। आपसी विवाद को सौहार्दपूर्ण तरीके से निपटाने का यह एक माकूल अवसर था।

निवेदिता ने कहा, ''मुझे न भी मिले तो चलेगा। छोटों से कैसी प्रतियोगिता?''

रुक्मा बोल उठी, ''पर मुझे जरूरत है। प्रेम-विवाह से इनके परिवार वाले पहले ही नाराज हैं, संपन्न भी नहीं हैं। मेरे भविष्य का सवाल है..।''

रंजन से रहा न गया, ''संपत्ति बेटों की होती है। बेटियों को उनके ससुराल के संपत्ति मिलती ही है। यही परंपरा चली आ रही है।''

निवेदिता ने रुक्मा का पक्ष लिया, ''रंजन! परम्परा हो या कानून, दोनों ही पुरुष सत्तात्मक समाज की अगुआई करते दिखते हैं।''

''वह कैसे दी?'' रंजन का प्रश्न उछला।

''पति ड्यूटी करते रहे और मैंने सासरे की जिम्मेदारियों के मध्य जीवन का एक बड़ा हिस्सा खपा दिया। फिर भी, सास-ससुर द्वारा की वसीयत में मेरा नाम हो या संपत्ति की खरीद-फरोख्त में याद की जाऊँ, हो ही नहीं सकता। मैंने कुछ प्रश्न उठाए थे, 'विवाह पूर्व बताया गया था कि लड़कियों का ससुराल की संपत्ति पर अधिकार होता है। पर यहाँ आकर देखा कि संपत्ति संबंधित सारे अधिकार बेटों के पास ही हैं। मशवरे का हिस्सा बनाना तो दूर, उसी वक्त बहुओं को रसोई में चाय बनाने भेज दिया जाता है!'

सासरे वालों ने सफाई दी, 'नये चलन और कानून के अनुसार बेटियाँ मायके की संपत्ति की हिस्सेदार होती हैं। उधर की संपत्ति की रजिस्ट्री करो तो मान्य होगी, सासरे की अमान्य।'

सोच कर देखो, 'सालों-साल ससुराल की चाकरी करते रहो। अगर अधिकारों के विषय में प्रश्न करो, तो हम पराए। मायके की संपत्ति पर नजरें डालो तो भाई-भाभी की आँखों में कंटक बन जाओ!'

पूछा जाता है, 'माँ-बाप की सेवा करने के वक्त बेटियाँ नदारद हो जाती हैं। अपने सास-ससुर से फुर्सत नहीं, तो मायके में हिस्सेदारी कैसी?' चिढ़कर गर किसी बेटी ने कोर्ट का दरवाजा खटखटा दिया तो उसके मुँह पर मायके का दरवाजा सदा सर्वदा के लिए बंद।

आखिरकार हम हैं क्या? पड़ोसी देश के 'शरणार्थी?' जिसका महज दोनों घरों में रोटी, पानी, सर पर छत का ही अधिकार रहता है, पर अपने एवं पराये देश, दोनों ही नजरें चुराते हैं..।

यही बढ़ता असंतोष और असंतुलन अधुना काल में, स्त्री आत्मनिर्भरता का मजबूत स्तंभ साबित हुआ, संग लाया आत्मविश्वास..। कब तक स्त्रियाँ शटल-कॉक सी मायके ससुराल के बीच....? हमें अस्तित्व की तलाश करनी ही होगी।''

कटाक्ष न समझ पाने का सफल अभिनय करता रंजन बोला, ''मुद्दे से भटक गई हैं दी, आप! यहाँ रुक्मा ने प्रेम-विवाह कर विपन्नता को स्वयं गले लगाया है। इसकी हिस्सेदारी कहाँ से आ गई?''

''ठीक कहा भाई! अधिकारों की संचिका में सिर्फ पुरुषों के नाम होने चाहिए तथा स्त्रियों को सब्र करने का सबक कंठस्थ होना चाहिए।'' अश्रु रुक्मा के नयनों की कोरों पर आकर ठहर गए।

श्री अशोक कुमार,
-3/101, अक्षरा स्विस कोर्ट, 105-106,
नबलिया पारा रोड, बारिशा,
कोलकाता - 700008, पश्चिम बंगाल
व्हाट्सएप नंबर 6290273367
neena-sinha@gmÛ-com

रॉन्ग नंबर

राजेश पाठक

सुमित पटना से गिरिडीह जा रहा था। स्टेशन पर वर्षों बाद कॉलेज के सहपाठी रमन से उसकी भेंट हो गई। इस तरह अक्समात भेंट होने से दोनों के मन के भीतर कॉलेज के दिनों की पुरानी सुखदाई स्मृतियाँ हिचकोले मारने लगीं। वे एक-दूसरे से हाथ मिला ही रहे थे कि उन्हें उनकी ट्रेन आने का अनाउंसमेंट सुनाई दिया। एक-दूसरे से पूछताछ के क्रम में पता चला कि वे दोनों एक ही ट्रेन से सफर करने वाले थे।

रमन ने कहा- ''चलो अब ट्रेन में जगह लेकर घंटों बात करेंगे। पुरानी खट्टी-मिट्ठी स्मृतियों को ताजा करेंगे।''

सुमित ने भी हाँ में अपना सिर हिलाया। उसने सोचा भी कि आज का दिन कितना खुशनुमा है कि पुराने दोस्त से भेंट भी हो गई, नई-पुरानी बातें भी होंगी और सफर भी आसानी से कट जाएगा। सुमित का सफर चार घंटे का था, जबकि रमन का सफर दो घंटे का था। ट्रेन आ गई, दोनों दोस्त ट्रेन के डब्बे में सवार हो गए। जगह भी साथ-साथ बना ली। थोड़ी देर बाद जब सुमित ने देखा कि रमन अपनी नजरें अपने मोबाइल से नहीं हटा पा रहा था। तो वही रमन से बातचीत शुरू करने के लिहाज से पूछ बैठा-

''अच्छा तो रमन बताओ कि तुम्हारे कितने बच्चे हैं और सब क्या कर रहे हैं?''

''थोड़ी देर रुको, एक मैसेज आया है। उसे पढ़कर जवाब दे लेने दो, फिर बताता हूँ।''

सुमित रमन के चेहरे को देखता रहा। वह (रमन) कभी मंद-मंद मुस्कुराता तो कभी हँस भी देता, कुछ मैसेज टाइप भी करता रहता। कहीं से कोई कॉल भी आता तो हँस-हँसकर जवाब भी देते रहता। इस तरह करते-करते दो घंटे का समय बीत गया। इस दरम्यान रमन की सुमित से कोई बात नहीं हुई। देखते-देखते रमन के गंतव्य वाला स्टेशन भी आ चुका था। रमन वहाँ उतरने के लिए उठ खड़ा हुआ और सुमित से कहा

''सॉरी यार! तुमसे बात नहीं हो सकी। ऐसा करो कि तुम अपना मोबाइल नंबर जल्दी से दे दो, ढेर सारी बातें करनी हैं तुमसे। मैं घर पहुँचते ही तुमसे बात करूँगा।

सुमित ने बेमन से ही रमन को जो नम्बर दिया वह रॉन्ग नंबर था।

सहायक सांख्यिकी पदाधिकारी
जिला सांख्यिकी कार्यालय, गिरिडीह
झारखण्ड -815301 मो नं 9113150917
मेल आ डी -
hellomrpathak@gmail-com

एक वर्षा गीत गिरेन्द्रसिंह भदौरिया 'प्राण'

=========

प्रिय को निहार कहती सुनारि जब लगातार बरसे बदरा।
पहले फुहार फिर धारदार फिर धुआँधार बरसे बदरा।।

वय के किशोर चितचोर छोर पर घटाटोप बरसे बदरा।।
हिय को हिलोर जिय को विभोर कर सराबोर बरसे बदरा।।

मुँहजोर भोर घनघोर शोर कर नशाखोर बरसे बदरा।
तब पोर पोरतक में हिलोर भर उठी जोर बरसे बदरा।।

किलकार मार शिशु सा पसार कर कलाकार बरसे बदरा।
ललकार मार तलवार धार बड़ अदाकार बरसे बदरा।।
प्रिय को निहार कहती----------।।

नभ से भड़ाम गिरते धड़ाम जब धरा धाम बरसे बदरा।
जल से सकाम करते प्रणाम जय सियाराम बरसे बदरा।।

लख तामझाम कसके लगाम सच खुलेआम बरसे बदरा।
गिरती ललाम उठती न वाम जग उठा काम बरसे बदरा।।

नभसे उतार जल को सँवार जब धराधार बरसे बदरा।
सरकार हारकर तार तार कर गए छार बरसे बदरा।।
प्रिय को निहार कहती----------।।

==========

"वृत्तायन" 957, स्कीम नं. 51
इन्दौर पिन- 452006 म.प्र.
म्उंपस चतंदांअप/हउंपस.बवउ
मो.9424044284/6265196070
==========

ख़ामोश आँखों में

बलजीत सिह बेनाम

ख़ुदा पे ठीकरें क्यों फोड़ता है
तेरी ही ख़्वाहिशों से दुःख बढ़ा है

ग़रीबी भुखमरी इसका सबब है
कोई अपनी ख़ुशी से कब मरा है

अगर दिल में फ़क़त उसके मोहब्बत
हवस से किसकी ज़ानिब ताकता है

मुझे साया जो देता था शजर वो
मेरी हसरत के बा स गिर गया है

तसव्वर से निकल आए हक़ीक़त
कहाँ अक्सर ये साहिब हो सका है

सम्पर्क सूत्रः 103/19 पुरानी कचहरी
कश्वलोनी,
नज़दीक इम्प्रैशन इंस्टिटयूट
हाँसी 125033
ज़िला हिसार (हरियाणा)
मो. नंबरः 9812214462

ऐ खुशी सुन!

-उदयवीर भारद्वाज

ऐ खुशी सुन!
यूं ही पड़ी रहती तू
न तुझे कोई पूछता
अगर यह गम न होता
कैसे जीते हैं लोग
सीने में दर्द लिए

तुझे इसका पता न होता
कि आज थोड़ा दर्द तो है
इंसान को इंसान से
यह गम सलामत रहे तू
वरना
इंसान ही इंसान को न पूछता

सुन! ए दौलत तू भी सुन
अगर पैसा न होता रिश्तों में
तो इस तरह भाई -भाई से न छूटता

न ठोकर लगती अरमानों को
और न ये शीशाये दिल टूटता

भारद्वाज भवन
मंदिर मार्ग कांगड़ा
हिमाचल प्रदेश 176001
मोबाइल 94181 87726

कलम मेरी कह रही है

-वीरेंद्र शर्मा

अवलोकित कर आज धरा को
अश्रुधारा बह रही है
अनिवार्य है विप्लव नया
अब कलम मेरी कह रही है।

अनियन्त्रित सब नियम यहाँ
सिद्धांत यहाँ अस्थाई हैं
संचय की प्रवृति बनी है
अनैतिकता ही समाई है
जग आलोकित करने वाली
सभ्यता अब है रो रही
अनिवार्य है विप्लव नया,
अब कलम मेरी कह रही है।

सत्य अहिंसा, दया-धर्म का
दिखता है नित पतन यहाँ
भ्रष्ट आचरण पुजता है
नित दानवता को नमन यहाँ

सुख से हुई अचम्भित
मानवता अब सो रही है?
अनिवार्य है विप्लव नया,
अब कलम मेरी कह रही है।

रामपुर बुशहर, जिला शिमला (हि.प्र.)
09459977143, 09129395440
ईमेल-solutionwithme@yahoo.com

दस्तक -कल्याणमय आनंद

मैं देख रहा हूँ
उस कमरे को
जिसमें क अधूरी कहानियाँ
तड़प/बिलख रही हैं
अपनी नजर हटाना चाहता हूँ
पर मेरी ष्टि
वहल्र जा टिकती है।
उनकी व्यथायें शायद मुझे
उस कमरे पर
दस्तक देने को बाध्य करती है
मैं दस्तक देता हूँ
पुनः दस्तक देता हूँ
को प्रत्युत्तर नहल्र मिल पाता
मेरा दस्तक देना जारी है
उस कमरे पर३३..
इसी आशा के साथ कि
एक दिन दरवाजा अवश्य खुलेगा
और मैं
उन आधी-अधूरी कहानियों को
पूर्ण रूप दे पाऊँगा३.
खुशहाल अन्त दे पाऊँगा !
घृणा,ल्रहसा और विद्वेष रहित
दया,प्रेम तथा करुणा की
म्लुमकता के साथ
कथा यात्रा तय करने के लिए ।

सोनाली,कटिहार-855114 (बिहार)
मोबाइल : 9967300367
मेलः
kalyanmayanand@gmail.com

प्यार-...क्या है?

-रॉबर्ट लुई स्टीवेंसन

अनुवादक-डॉ.रूपचन्द्र शास्त्री 'मयंक'

आज तुम्हारे बिना हमारा,
कितना शान्त अकेला घर है
नये-पुराने मित्रवृन्द के लिए
प्रशंसा के कुछ स्वर हैं
सुन्दर और युवा मित्रों के
लिए बना है माह दिसम्बर
किन्तु मई का मास अलग है
छिपा अनुग्रह इसमें सुखकर
पेरिस का तो हरा रंग है
नीले रंग का मेरा अम्बर
जैसा पाया वही लिखा है
नहीं किया है कुछ आडम्बर
दूर बहुत है ऊँची चोटी
मुझको करती हैं आकर्षित
कभी न विस्मृत कर पाऊँगा
अपने करता भाव समर्पित

(Robert Louis Stevenson
Nationality & Scottish
Date of Birth& November 13] 1850)

अमर भारती चिकित्सालय, टनकपुर रोड,
खटीमा (उत्तराखण्ड)

मजदूर औरत

राजकुमार जैन राजन

दुत्कार, अपमान,
लांछनों का भार सहते-सहते
वह मजदूर औरत
फ्लाई ओवर के नीचे
दो ईंटों के चूल्हे पर
अंगूठा चूस रही भूखी मुनिया
और टी.बी.से खांसते हुए
उसके बापू रामू के लिए
कुछ खाना पकाने के जतन करती
दबंगों की दबंगई से
डरती-सहमती
नाकाम कोशिशों के बाद
थक कर सो जाती है

रोज-रोज आसपास मंडराते
लम्पट युवाओं की
वासना भरी नजरों से
अस्मिता बचाने का संघर्ष
ख़ौफ और बेबसी का आलम
मर गई नैतिकता
और डूबती हुई मनुष्यता के बीच
सिर पर लिए बोझ भूख का
कंधे पर टँगे दायित्व
रामू और मुनिया के
अपनी सूनी आँखों में
सपने लिए दौड़ती रहती है

इसका जीवन
दु:खों की अन्तहीन यात्रा कथा है
रोटी भले ही न मिले
सपने तो पलते हैं
इनके लिए उम्मीद
एक धोका है
जीवन की दिशा बदलने का
आश्वाशन दे
कई आवाजें भीड़ में
गुम हो जाती हैं
हर बार

जिंदगी की छटपटाती हुई
जिजीविषा के साथ
हर सुबह दर्द को मुट्ठी में कैद कर
पत्थरों की भीड़ से सपने उठा
चल देती है फिर से
अपने श्रम से
लोगों के नीड़ बनाने।
.....

चित्रा प्रकाशन
आकोला . 312205 (चित्तौड़गढ़) राजस्थान
मोबाइल. 9828219919
मेल. rajkumarjainrajan@gmail.com

पारस

-आशा शैली

गतांक से आगे:-

त्रिखा जी इस बार दस दिन की छुट्टी लेकर आए थे। उन्हें जब भी समय मिलता वे सोमनाथ को घेर लेते। कैलाश भाभी भी बड़े प्यार से अपने पास बैठाकर उन्हें दुनिया की ऊँच-नीच समझाती और घर को एक जनानी की जरूरत है इस बात पर दोनों पति-पत्नी बराबर जोर देते। विधुर सोमनाथ पर दूसरे विवाह का दबाव लगातार बढ़ने लगा था, नाते-रिश्तेदारों की ओर से उसके लिए रिश्ते आने तो उसी समय से शुरू हो गए थे जब जानकी का शव अभी अग्नि के सपुर्द भी नहीं हुआ था। सोमनाथ के अकेलेपन, खेती और घर-बार की मुश्किलों को देखते हुए इस बार आखिर त्रिखा जी ने उसे विवश कर ही दिया कि वह उनका कहना माने। सोमनाथ के ससुराल वालों का भी यही मानना था कि अब सोमनाथ को फिर से व्यवस्थित होने की बढ़ी जरूरत है।

''देख सोमे, लोहड़ी के बाद सभी चले जायेंगे, तू फिर अकेला हो जाएगा। इस बार पारस को सत्या नहीं ले जाएगी। उसके पति और ससुर का रवैया मैंने देख लिया है। वे नहीं चाहते कि यह बेगार उनके सर पड़े और दुध-पुत्तर रुलाने (लतियाने) के लिए नहीं होते। हमारा बच्चा फालतू नहीं है।''

''मैं पारस को अपने पास रख लूँगा, वह नौकर अपने बच्चे हवेली में ले आया है जिसकी मैंने आपसे बात की थी। मेरा भी दिल लगा रहेगा आप चिन्ता न करो।'' सोमनाथ भाई का बहुत सम्मान करता था और उनकी कोई बात टालता भी नहीं था, पर जानकी के प्यार ने उसे इस तरह जकड़ रखा था कि वह उससे आगे कुछ सोच ही नहीं सकता था।

''काका जी, पारस हमारे लिए बोझ नहीं है, पर हम चाहते हैं कि आप अपनी जिम्मेदारी को खुद ही निभायें।'' इस बार कैलाश फिर बोल पड़ी, वह ज्यादा बोलती नहीं थी पर जो कहती थी वह होना ही है, यह सोमनाथ भी जानता था। वह यह भी जानता था कि वे सब लोग उसके लिए ही तो सब कर रहे हैं और जो भी वे कह रहे हैं उसकी सच्चाई भी वह समझ रहा था। आखिरकार भाई-भाभी के अथक प्रयास के आगे सोमनाथ को हथियार डालने ही पड़े। उसने चुपचाप सिर झुका दिया, ''जैसा आप को ठीक लगे।'' कहकर वह बाहर निकल गया। त्रिखा दम्पति ने भी सुख की सांस ली और बिना देर किए, बिरादरी में से ही एक गरीब परिवार की सुन्दर-सी लड़की देखकर बड़ी सादगी के साथ दिए।

नाथ की पत्नी जानकी का देहान्त हज़ारे के बाग़-बगीचे ख़ुबानी, आड़ू और आलूबुख़ारे के पेड़ फूलों से लदे पड़े थे। यानि अप्रैल का महीना था और आज! जब राजवन्ती पारस की दूसरी माँ बनकर घर में आई तो जून का मध्य यानि फल पके हुए थे। सिन्दूरी-संतरी रंग के आड़ू जिन्हें देखते ही मुँह में पानी भर आये। मीठी-मिसरी जैसी सफेद शकरपारा ख़ुबानी जो मुँह में रखते ही घुल जाए, कालापन लिए हुए रसभरा सैंटारोज़ा आलूबुख़ारा पूरा का पूरा मुँह में रखते ही न बने और महक़ ऐसी कि सचमुच सैंटारोज़ा नाम सार्थक करे। दो आलूबुख़ारों से ही पेट भर जाए। पीला आलूबुख़ारा, शहद जैसा

मीठा। वह भी समय था जब सोमनाथ इन फलों से लदे पेड़ों को देखकर खुशी से झूमने लगता था औ अब?

अब उसे लगता कि बाग में पकने वाले इन फलों को तुड़वाना, पेटियों में भरना और समय पर मण्डियों में पहुँचाना कोई आसान काम थोड़े ही हैं। सोमनाथ को तो शुरू से ही इन कामों का अभ्यास था और यह काम उसकी रुचि का भी था, इसलिए उसे कोई परेशानी नहीं होती थी। पर हाँ उसका अधिक समय बाग और पशुओं की देखभाल में पहले भी जाता था और अब भी चला जाता। उसे घर का कुछ पता नहीं था, न तो कभी पहले ही रहा और न अब था।

दिन भर सोमनाथ को घर तो रहना नहीं होता। सुबह का निकला वह रात को ही घर लौटता। दिन का भोजन नौकर खेत पर ही ले जाता था। सोमनाथ को बाग़-बगीचे, धान-ईख की फसल से ही फुर्सत नहीं थी। फसल की रखवाली और सार-सँभाल, मण्डी तक भेजने का काम और इन सब के ऊपर राजवन्ती की सोलह वर्षीय कटीली आँखें, वह भी आखिर इनसान था और उस पर जवानी की उमर।

पारस की चिन्ता किसे होती? ड्योढ़ी का जालीदार दरवाजा बंद करके उसे पूरे घर में खुला घूमने दिया जाता। मिट्टी-धूल से लिथड़ा पारस कहाँ भटक रहा है, कौन देखता? अब जून का महीना है तो धूप तो तपेगी ही। बेचारा पारस कभी रोते-रोते ड्योढ़ी और कभी बरामदे में ही सो जाता, राजवन्ती भीतर अपने कमरे में पंखा झल रही होती। कभी-कभी गुस्सा होने पर वह पारस को पीट भी देती थी इसलिए पारस बहुत सहम गया था। हाँ शाम होने से पहले वह पारस को नहला जरूर देती और दूध भी पिला देती ताकि सोमनाथ को कुछ भी पता न चले। पारस नहाने के बाद सो जाता और कोई कुछ भी नहीं जान पाता। सोमनाथ को लगता, सब ठीक ही चल रहा है

.....

स्कूलों में छुट्टियाँ हुईं तो हर साल की तरह दीवान चन्द त्रिखा बच्चों को लेकर गाँव की ओर चल पड़े। कोई टैलीफोन का ज़माना तो था नहीं कि पहले से खबर होती। रावलपिण्डी से गाँव पहुँचने तक दोपहर हो गई थी।

स्टेशन पर ही गाँव के जाने-पहचाने मुल्ला जी का तांगा मिल गया। त्रिखा परिवार को देखते ही मुल्ला जी उधर लपके,

''सलाम शाह जी।''

''सलाम मुल्ला जी, टांगा खाली ए?''

''हाँ जी, खाली ए। आओ मैं छोड़ आवां।''कहा तो पूरा परिवार बिना कुछ कहे, लपक कर तांगे पर

जा चढ़ा। धूप तेज़ हो चली थी, राजवन्ती अभी सोने नहीं गई थी। बाहर का दरवाजा बंद करने के लिए अभी दरवाजे तक आई ही थी कि अचानक ही

जेठ-जेठानी को दरवाजे के पास देखकर उसने हड़बड़ाकर दुपट्टा होंठों तक खींच लिया और आधा बंद दरवाजा खोल दिया। बच्चे तांगे पर से हल्का सामान उतार रहे थे। कपड़ों का ट्रंक उठाए मुल्ला जी हवेली के अन्दर आ चुके थे।

राजवंती ने झुक कर जेठ-जेठानी के पाँव छू लिए। कैलाश, चारों तरफ का जायज़ा ले ही रही थी कि उसकी नज़र सामने आँगन में नीम के नीचे बैठे नन्हें पारस पर चली गई। बड़े-से आँगन के दूसरे कोने में पेड़ के नीचे धूल-मिट्टी में लिथड़े, मैले कपड़ों, घुंघराले धूल भरे बालों वाले बच्चे की पहचान को रो-रोकर गालों पर जमी आँसुओं की धाराएँ खो रही थीं। वह तो भला हो उसके घुंघराले बालों, माथे पर लगी चोट के निशान और नीली आँखों का कि वह एक नज़र में ही पहचान लिया गया।

कैलाश ने एक तीखी नज़र देवरानी के साफ़-सुथरे कपड़ों पर डाली। पेड़ तक उसकी चाल लगभग दोड़ने ही वाली थी। उसने झपट कर बच्चे को गोद में उठा लिया। त्रिखा जी बच्चे को नहीं देख पाए थे, वे पहले ही भीतर जाकर अपना कमरा खोल चुके थे। उनके दोनों बेटे और दोनों बेटियाँ भी अपना सामान लेकर जा चुके थे। राजवन्ती ने सिर पर हाथ रखकर अपना घूंघट पीछे सरकाया और खिसियानी-सी आगे बढ़कर जेठानी की गोद से पारस को लेने लगी-

''बहुत शैतान है यह भरजाई जी, मेरी जरा आँख लग गई थी। पता नहीं यह कब बाहर आकर मिट्टी में खेलने लगा। लाइए, मैं इसे नहला देती हूँ। आप सफर से थके हैं आराम करें। मैं पहले आप लोगों के लिए लस्सी लाती हूँ।''उसकी आँखें धरती की ओर झुकी हुई थीं।

कैलाश ने देवरानी को खा जाने वाली नज़रों से देखा और पारस को उसके हवाले कर दिया पर बच्चा, जो ताई की गोद में आराम से था राजवन्ती के पास जाते ही मचलकर गोद से उतर गया और फिर भागकर वहीं जा बैठा जहाँ से कैलाश उसे उठा लाई थी। कैलाश ने राजवन्ती की तरफ देखा, वह अपने कपड़ों से धूल झाड़ रही थी, जो पारस को उठाने से उसके कपड़ों में लग गई थी। कैलाश फिर पारस के पास जाकर उसे पुचकारने लगी, ''राजा पुत्तर, गंदे काम क्यों कर रहा है? चल नहा लइए। मेरा सोहणा बिल्लू होर सोहणा हो जाएगा। चल पुत्तर।''

पारस इतना बड़ा तो हो ही गया था कि कभी-कभी आने वाली ताई को पहचानने लगा था। वह अच्छी तरह बोल सकने के बाद भी थोड़ा तुतलाता ही था, ''बी दी,(बीजी) तुछी नुहाओदे? (आप नहलाओगे)?''

''हाँ पुत्तर, चल मेरे साथ।'' पारस झट से उठकर ताई की अंगुली पकड़कर उनके साथ चल दिया।

.....क्रमशः

फादर कामिल बुल्के

कुबेर दत्त

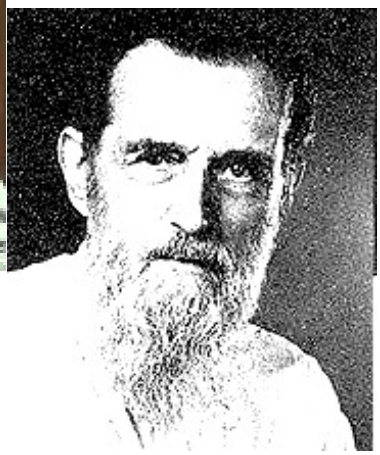

डॉ. फ़ादर कामिल बुल्के, जैसा कि हम सभी जानते हैं विदेशी थे। उनका जन्म बेल्जियम के एक गाँव में एक सितम्बर 1909 को हुआ। वे कहा करते थे-जिस रामकथा सम्बन्धी काम के लिए लोग उन्हें जानते हैं, उस राम से भगवान ने उनका सम्बन्ध जन्म के समय ही जोड़ दिया था। असल में उनके गाँव के नाम में 'रम्स' आता है।

प्रारभिक शिक्षा के बाद उन्होंने इन्जीनियरिंग की पढ़ाई शुरू की। प्रथम वर्ष की परीक्षा देने के बाद ये अपने गाँव गये। तब तक उनके मन में यही था कि वे इन्जीनियर बनकर एक सामान्य गृहस्थ के रूप में जीवन बितायेंगे। लेकिन एक दिन जब वे फुटबाल खेलकर घर लौटे तो कुछ विश्राम के बाद वे एक किताब पढ़ने लगे। अचानक उन्हें लगा कि किताब के पृष्ठों पर एक बिजली सी कौंधने लगी। उन्हें लगा जैसे वे किसी सम्मोहन में बंध गये हैं। उनके मन में धारणा बनने लगी कि उन्हें सन्यास ले लेना चाहिये। कई दिन वे चुपचाप रहे। उनके इस बदले हुए व्यवहार से घर के लो आश्चर्य में पड़ गये।

अपने अनमने पन में वे शहर लूवेन लौटे जहाँ वे इन्जीनियरिंग की पढ़ाई कर रहे थे। दूसरे वर्ष के अध्ययन के दिन थे। कभी-कभी वे शहर की जेसुइट सेमिनिरी में लैटिन पढ़ने जाने लगे। उन दिनों धर्मशिक्षा के लिये लैटिन पढ़ना अनिवार्य था।

अंततः एक दिन उन्होंने सन्यास लेने सम्बन्धी निर्णय को अपने माता-पिता को बताया। तब तक वे इन्जीनियरिंग के दूसरे और अंतिम वर्ष की पढ़ाई पूरी कर चुके थे। माता-पिता ने कष्ट के साथ मगर शांत मन से उनके निर्णय को स्वीकार कर लिया।

अब उन्हें धार्मिक शिक्षा के कई कोर्स पूरे करने थे जो उन्होंने किये और वे 1934 में ब्रदर बनकर लूबेन की सेमिनरी में आ गये। यहाँ उनके सामने दो विकल्प थे, देश में रहेंगे या विदेश में। उन्होंने भारत में काम करने की इच्छा प्रकट की। अधिकारियों ने उन्हें सूचित किया कि 1935 में किसी समय उन्हें भारत भेजा जायेगा। मगर अनिवार्य सैनिक सेवा के राष्ट्रीय विधान के तहत उन्होंने चिकित्सा विज्ञान का एक वर्षीय पाठ्यक्रम पूरा किया। साथ ही वे लूवेन विश्वविद्यालय में कार्यरत प्रसिद्ध वैज्ञानिक डॉ. ल' मैत्र के निर्देशन में आइसंटाइन के सापेक्षवाद और उच्चतर गणित का अध्ययन भी किया। जून 1935 में दोंनों पाठ्यक्रम समाप्त हो गये। संघ के अधिकारियों ने उन्हें यह सूचना दी कि वे अक्तूबर में भारत के लिए प्रस्थान कर सकेंगे।

अंततः पानी के जहाज़ से वे नवम्बर में बम्बई पहुँचे। सन् 36 में उन्हें भौतिकी और रसायन विज्ञान के अध्यापक के रूप में सन्त जोसेफ़ कालेज, दार्जिलिंग भेजा गया। पर वे वहाँ प्रतिकूल मौसम के कारण बीमार होकर जून में राँची लौट आये।

कामिल बुल्के भरत आते ही यहाँ की बड़ी भाषा हिन्दी से बहुत प्रभावित हुए। उन्होंने हिन्दी सीखना शुरू किया। वे हिन्दी की कक्षा में विद्यार्थियों की पिछली कतार में जाकर बैठ जाते थे। धुन के पक्के कामिल एक वर्ष में न केवल खड़ी बोली सीख गये बल्कि ब्रज भाषा और अवधी भी समझने लगे। तुलसी से वे गहरे तक प्रभवित हुए जिसका परिणाम यह हुआ कि उन्होंने हिन्दी और संस्कृत का अध्ययन करने का निश्चय किया। उनकी चाहत को देखते हुए अधिकारियों ने उन्हें हजारीबाग़ के सीतामढ़ी भेज दिया। वहाँ उन्होंने पं. बद्रीदत्त शास्त्री की देख-रेख में हिन्दी और संस्कृत सीखी। कठिन परिश्रम और असाधारण प्रतिभा के रहते उन्होंने कुछ ही महीनों में इन भाषाओं पर इतना अधिकार कर लिया कि वे बिना किसी दिक्कत के तुलसी साहित्य, पंचतंत्र, गीता और बाल्मीकि रामायण का अर्थ निरूपण करने लगे। उनके गुरूदेव बद्रीदत्त जी उन्हें चलता-फिरता शब्दकोश कहते थे।

1939 में उनकी धार्मिक शिक्षा शुरू हुई। इसके लिये वे चार वर्ष करसियांग भेजे गये। 1940 में उन्होंने हिन्दी साहित्य सम्मेलन प्रयाग की 'विशारद' परीक्षा पास की।

फ़ादर कामिल बुल्के ने भारत के ईसाई धर्मसंघों को हिन्दी के ज़रिये से यहाँ के जनसाधारण से जोड़ने और परायेपन से मुक्त करने की दिशा में कोश और अनुवाद के क्षेत्रों में विशिष्ट कार्य किये। उन्होंने सबसे पहले धर्म की परिभाषिक शब्दावली का एक लघु कोश तैयार किया। इसका नाम था 'ए टैक्नीकलइंग्लिश हिन्दी ग्लॉसरी'। इसका प्रकाशन 1955 में हुआ। इसका व्यापक स्वागत हुआ। इससे प्रभावित होकर उन्होंने एक बड़ा काम यह किया कि इंग्लिश-हिन्दी शब्दकोश बनाया और 1968 में यह हिन्दी जगत के हाथों में आया। यह हिन्दी में अपने विषय का सर्वश्रेष्ठ कोश है।

उन्होंने बाइबल का हिन्दी अनुवाद भी प्रारम्भ किया लेकिन बीच-बीच में उन्हें दूसरे कुछ काम करने पड़ते थे जिससे बाइबल के अनुवाद में बाधा पड़ती थी। मृत्यु के कुछ महीने पूर्व तक वे इस अनुवाद में लगे हुए थे। वे बुरी तरह बीमार पड़ गये। उनके पैर की उंगली में गैंग्रीन हो गया और हालत जब काफ़ी बिगड़ी तो नयी दिल्ली के एम्स में उन्हें भरती कराया गया। मृत्यु की सन्निकटता का आभास होने पर उन्होंने 15अगस्त 1982 को फ़ादर प्रोविंशियल पास्कल तोपना से कहा-''फ़ादर, मैं ईश्वर की इच्छा सम्पूर्ण हृदय से ग्रहण करता हूँ और उनके पास जाने को तैयार हूँ। अब मुझे बाइबल अनुवाद पूरा करने की चिंता नहीं है। प्रभु बुलाते हैं तो मैं प्रस्तुत हूँ। 17 अगस्त 1982 को सुबह 8बजे उनका निधन हो गया। दूसरे दिन 18 अगस्त 1982 को दिल्ली के कश्मीरी गेट स्थित कब्रगाह में उन्हें दफ़न किया गया।

फ़ादर कामिल बुल्के बहुत निश्छल स्वभाव के थे। वे कहते थे, प्रेम करो, सेवा करो। वे सबसे खुले दिल से मिलते थे। वे महान पारिवारिक थे। उन्होंने तनावग्रस्त अनेक परिवारों को टूटने से बचाया।

1950 में वे भारत के नागरिक हो गए थे और खुद को भरतीय ही कहते थे। वे धार्मिक मतभेदों के सख़्त ख़िलाफ़ थे। भारतीयता और भारतीय संस्कृति और भारतीय भाषाओं की अन्तर्भूत क्षमताओं में उनका विश्वास इतना गहरा था कि वे अंग्रेज़ी के प्रबल प्रचलन को राष्ट्रविरोधी मानते थे। हाँ आवश्यक सीमा तक अंग्रेज़ी से उन्हें परहेज़ नहीं था। वे संस्कृत को भारतीयता की कुंजी मानते थे। एक बार मनोविनोद करते हुए उन्होंने कहा था-''संस्कृत महारानी, हिन्दी बहूरानी और अंग्रेज़ी नौकरानी है।''

उन्हें अनेक राष्ट्रीय-अंतर्राष्ट्रीय सम्मान/पुरस्कार

आदि मिले। वे बिहार राष्ट्रभाषा परिषद, नागरी प्रचारिणी सभा और प्राच्य विद्या संस्थान के आजीवन सदस्य थे। 1974 के गणतंत्र दिवस के अवसर पर 'पद्मभूषण' से अलंकृत हुए। बेल्जियम के राजा ने उन्हें राजकीय अकादमी का सदस्य मनोनीत किया था।

जीवन में उन्होंने अनेक बीमारियों का सामना किया लेकिन उनकी कर्मधारा कभी बाधित नहीं हुई। जबकि दमा तो उनका सहचर ही था।

वे खूब सक्रिय रहते थे और लोगों से खूब मिलते-जुलते थे। वे साइकिल चलाते थे। साइकिल चलाकर वे ख़ुद से अनेक लोगों से मिलने उनके घर पहुँच जाते थे। उनका एक नियम था। वे हरदिन शुक्रवार को 3 बजे दिन में काफ़ी के बाद साइकिल से राँची के ग्रामीण इलाकों की सैर के लिए निकल पड़ते थे और शाम तक ही वापस आते। काम की ऊब मिटाने के लिये वे 'स्टेटस्मैन' की वर्ग पहेलीहल करते या शाम को मनरेसा हाउस के सन्यासियों के साथ ब्रिज खेलते।

डॉ. फ़ादर कामिल बुल्के भारतीयों से भी अधिक भारतीय थे। एक अवसर पर उन्होंने कह था-''भगवान के प्रति धन्यवाद जिसने मुझे इतने प्रेम से अपनाया''। उनकी चिर स्मृति को मेरा नमन।

159-आकाश दर्शन अपार्टमेंट्स
मयूर विहार, फेज-1, दिल्ली
011-22754845, मो.09868240906

एक भिखारी का दर्द

रमेश चन्द्र

गीत जब गाती भिखारिन,
थाम मैं देता!
साज में आवाज के वह तार खींचती,
दर्शकों में गोया, अपना भाग्य खोजती।
गीत के ही मध्य में जब वेदना-प्रवाह
निःसृत होता उसके मुख से
और उसमें कलात्मकता देखकर अथाह,
झूम उठते दर्शक, कहते ''वाह! वाह!''
थाप मैं देता!
साज जब और-और सुर खोलता,
ढोल जब तेज-तेज बोल बोलता,
दिल मेरा आहें करुण भरता,
प्रिया अपनी देखता-अनदेखता,
थाप मैं देता!
वे चपल दर्शक, हेरकर प्रिया-वक्ष,
सुन-सुन प्रिया-वचन, नचा-नचा अपने नयन,
होते मत्त भिक्षुका-आनन से,
पैसा फेंकते न दामन से।
वह मांग-मांगकर हारती,
हाथ को निहारती,
बार-बार, तेज-तेज साज भी टंकारती,
थाप मैं देता!
देखने वालों की, देखकर कुटिलता,
मैं दीन-हीन-सा, साज में नवीन-सा,
बन सूरदास-सा, करता आश-सा,
प्रिया के दिल के रहकर पास-सा,
थाप मैं देता!

9711011034
गुरुग्राम, हरियाणा-122001

परिधियों से परे

-अंजना छलोत्रे 'सवि'

''तुमसे कितनी बार कहा है, तुम चली जाओ पार्टी में, मैं तुम्हारे साथ नहीं जा सकता।"...प्रभास झल्ला पड़ा।

''क्यों,... क्या मेरी सफलता तुम्हें चुभने लगी?"

''मुझे क्यों चुभेगी, मैं को तुम्हारा गुलाम हूँ? रोहित है न तुम्हारे पास जो तुम्हारे इशारों पर नाचता है।".. तल्खी से उसने कहा।

''देखो, विलावजह तो तोहमत लगाओ मत तुम, जानते हो कि हमारे बीच क्या रिश्ता है, जलते हो तुम, क्योंकि उसने मुझे हौसला दिया है, अपने पैरों पर खड़े होने की ताकत दी है।"

''तुम कुछ भी समझो, लेकिन मैं तुम्हारे साथ नहीं जाऊँगा बस।"

''आ गए ना अपनी औकात पर? कभी मेरे बारे में सोचा है? मैं कैसे तुम्हारे साथ ऐसी पार्टियों में जाती हूँ और एक कोने में खड़ी रहती हूँ? तुम मंजुला के साथ बिजनेस मीटिंग में, वहीं होकर भी व्यस्त हो जाते हो। मैंने तो कभी तुम्हारे और मंजुला के बारे में कुछ नहीं कहा। तुम उसके इशारों पर भी नहीं नाचते।".. विजया ने तर्क दिया।

''वह हमारा प्रोफेशन का मामला है, व्यक्तिगत कुछ नहीं।".. प्रभास ने भी स्पष्ट किया।

''मेरा, तुमने कैसे व्यक्तिगत मामला बना दिया? तुम्हारे कहने पर मैं कैसे तुम्हारे संबंधों की सत्यता समझ लूँ जबकि तुम तो मेरे पहले कदम पर ही ऐसा व्यवहार कर रहे हो? मैंने तुम्हें ग्यारह वर्ष कैसे सहन किया??".. विजया की सांस फूलने लगी, अपने संबंधों का स्पष्टिकरण देते खीज हो आई।

प्रभास चुप! उसे लगा, बात में दम तो है, जैसे मुझे महसूस हो रहा है विजया भी तो वैसे ही महसूस कर सकती है, उसने तो कभी मुझे कुछ कहा तक नहीं, इतना कुछ सहन किया है, वाकई! मुझसे तो ज्यादा धैर्य है विजया में, वरना अभी तक तो जाने कितनी बार युद्ध हो गया होता, कुछ देर सोचता रहा। विजया भी मौन बनी रही। प्रभास अंदर गया और तैयार होकर आ गया।

''चलो चलते हैं पार्टी में।"...प्रभास ने अपनी टाई की गांठ ठीक करते हुए कहा।

''नहीं, अब मुझे नहीं जाना पार्टी में।"..विजया ने रूठकर कहा।

''देखो विजया, मैं समझ गया तुम्हारी बात को। क्या कहना चाहती हो, महसूस भी कर रहा हूँ, प्लीज अब चलो भी।" प्रभास के स्वर में मनुहार का पुट था।

''ठीक है।".. कहकर विजया साथ हो ली, लेकिन उसका मूड खराब हो चुका था। इतनी छोटी सोच है प्रभास की, जबकि रोहित हमेशा प्रभास के बारे में ही बातें करता रहता है। उसकी गलतियों को भी खूबी ही बना देता है, ऐसे में उसकी भावना का गलत अर्थ लगाना क्या प्रभास को शोभा देता है। मैं तो रोहित को सच्चा दोस्त ही मानती आ रही हूँ, जिसने मेरे व्यथित मन को कभी भटकने के लिए उकसाया नहीं, हमेशा ऐसा संभालता है जैसे मैं कांच की बनी हूँ, जरा सी चोट पर टूट कर बिखर जाऊँगी।

आज पार्टी में रोहित भी आया था, विजया के चेहरे के भाव को शायद उसने पढ़ लिया था।

''समस्या अगर हल हो जाए तो सामान्य हो जाना चाहिए।".. नजदीक आकर धीमे से बोला रोहित।

विजया होले से मुस्कुरा दी, अब उसे थोड़ी राहत मिली है। रोहित बिना बताए ही उसकी मन: स्थिति जान जाता है और प्रभास को बताने पर भी; वह समझ कर कभी-कभी नासमझ ही बना रहना चाहता है, कितना फर्क है दोनों में।

बहुत समय बच्चों के लालन-पालन में तो कुछ समय संधर्ष ओर प्रयास करने में बीत गया। विजया अच्छी कंपनी में चार्टर एकाउन्टेंट शिप कर रही है। प्रभास,अपने बिजनेस में मशगूल है। बच्चे अपनी मंजिलों की ओर अग्रसर हैं।

रोहित जरूर अब कुछ बुझ सा गया है, शायद अकेलापन उसे खलने लगा है। बहुत बार कह भी चुकी है कि अपने लिए एक साथी चुन लो, हमेशा मुस्कुरा कर रह जाता है। विजया को उसकी फ्रिक होती है और ज्यादा दवाब डालती है तो कह देता.. ''कहा से ढूँढ कर लाऊँ?"

विजया को लगने लगा है कि यह काम भी उसे ही करना पड़ेगा। वह हर समय रोहित के योग्य कन्या की तलाश में लगी रहती, एक-दो जगह बात भी कर चुकी है, लेकिन बात बनी नहीं।

विजया बहुत दिनों से रोहित को साथी किस तरह उपलब्ध करवाए की सोच में तो थी ही, अच्छी नौकरी करता रोहित अकेलेपन में ही हरदम रहना पसंद करने लगा है ।

जब तक विजया को उसके मन मुताबिक नौकरी नहीं मिली थी, तब तक वह विजया की हौसला अफजाई करता था, उसको धैर्य रखने को कहता, ताकि विजया में आत्मविश्वास का संचार बना रहे।

हालांकि आज भी दोनों मिलते हैं, प्रभास भी साथ होते हैं, किंतु कुछ नया नहीं हो पा रहा है, जिससे जीवन में एकरसता बढ़ती जा रही है।

विजया के ऑफिस में आई नई सहकर्मी को जब विजया ने पहली बार देखा तो मंत्रमुग्ध हो गई। हे ईश्वर क्या खूबसूरती दी है तूने भी, पर वह तो बेपरवाह होकर अपने में मस्त रहती है।

आजकल विजया उस नई सहकर्मी 'क्रान्ति' पर केन्द्रित है, क्रान्ति की उम्र भी मध्यम है, समझ तथा अनुभव की गहरी पैठ लिए वह जब चलती तो मानो हर कदम पहले से सोचा हुआ लगता है।

वैसे विजया से वह जरूरी ऑफिस की बात ही किया करती जिससे उन दोनों में घनिष्ठता नहीं बनी। विजया कोशिश करती की क्रान्ति से घुल मिल जाए, किंतु क्रान्ति के चेहरे की शांति, बात आगे बढ़ाने की हिम्मत नहीं करने दे रही है ।

फिर एक दिन विजया ने उसे कैंटीन में चाय पीने की दावत दे ही दी। सहर्ष क्रान्ति भी तैयार हो गई। चाय के साथ-साथ उसने क्रान्ति के बारे में बहुत कुछ जाना, क्रान्ति ने बताया कि वह अनाथ आश्रम में पली बढ़ी और अब अपने पैरों पर खड़ी है। अपना कहने को आश्रम के साथी ही हैं, जिन्हें मिलने वह माह में एक बार जा पाती है, आर्थिक मदद भी करती है वह उन सबकी। यह सब क्रान्ति ने इतनी सहजता से बता दिया, मानो यह सामान्य बात है ।

विजया ने अपने दोस्त रोहित से मिलने जाने की बात क्रान्ति से की ओर कहा की वह भी साथ चले। पहले तो वह झिझकी, इस शहर मैं वह नई है। उसकी तो किसी से दोस्ती भी नहीं, असमंजस में है लेकिन फिर विजया के बहुत कहने से साथ चलने के लिए मान ही गई और एक दिन शाम को क्रान्ति, विजया की गाड़ी में रोहित के घर के लिए निकल गई। बहुत कुछ वह रोहित के बारे में बता ही चुकी है लेकिन पारिवारिक पृष्ठभूमि नहीं बताई। क्रान्ति भी जीवन को सुखमय बनाने का मन तो बनाये हुए है ही।

रास्ते में चौराहे पर विजया को अपनी बेटी का कुछ सामान लेना था, वह चाहती थी कि रोहित और क्रान्ति उसकी अनुपस्थिति में मिलें।

''यह सामने ही बिल्डिंग में, रोहित का फ्लेट नम्बर बीस है, तुम रोहित के घर पहुचो, मैं आती हूँ।"..विजया ने कहा।

''आपके साथ चलते तो ठीक था।"..क्रान्ति ने अनुरोध किया, उसे अजीब भी लगा रहा है।

''मुझे सामान लेने में वक्त लगेगा, फिर घर जल्दी भी निकलना है, समय क्यों बर्बाद करें? मैं आती हूँ, तब तक तुम रोहित से बात करना।" विजया समझाती हुए बोली।

अजीब तो लग रहा था क्रान्ति को, फिर अनमने मन से राजी हो गई। उसने पहले आस-पास का जायजा लिया, सोसाइटी तो ठीक-ठाक है, चौथे माले पर महाशय का फ्लैट है। अनेक बुरे विचार घेरने लगे, स्वयं पर गुस्सा भी आया। कहाँ, यहाँ आने की हाँ कर दी।

क्रान्ति ने डोरबेल बजा दी, वह जानबूझकर इतने धीरे-धीरे चल कर आई है कि जब तक वह पहुँचे, कुछ देर बाद ही विजया भी आ जाए।

दरवाजा खुला, फ्रेंच कट दाढ़ी, गौरवर्ण काया, सुगठित शरीर, आँखों के नीचे कालापन, गले में झूलती टाई, एक हाथ से दरवाजे को थामे वह क्रान्ति को देखता रहा। क्रान्ति का भी यही हाल था। कुछ देर तक दोनों के बीच मौन व्याप्त रहा, कुछ देर बाद रोहित ही सम्हला।

''जी।"

''मैं क्रान्ति! मैं विजया जी के साथ ही आती, किन्तु नीचे शाप पर उन्हें कुछ सामान खरीदने के लिए रुकना पड़ा और मुझे यहाँ इंतजार करने को कहा है।"..क्रान्ति एक ही सांस में वह बोल ग ।

''आइए।"..कहते हुए रोहित अन्दर मुड़ गया।

ड्राइंग रूम था तो सुंदर, किन्तु अव्यवस्थित, सोफों पर कपड़े पड़े हैं, उन्हें उठाकर दूसरे रूम में ले जाते हुए रोहित के चेहरे पर झेंप आ गई। लौट कर आया तो पानी साथ ले आया।

क्रान्ति, कमरे का मुआयना करने लगी, लगता है बीवी मायके गई होगी, तभी घर की यह हालत है। विजया ने कभी बताया नहीं, बस वह तो रोहित के नाम से ही परिचित है जो विजया का दोस्त है।

''आप क्या, विजया के साथ काम करती हैं?" रोहित पानी की ट्रे को टेवल पर रखते हुए पूछा।

''जी।" नजरें झपकाकर जब क्रान्ति ने रोहित की तरफ देखा तो वह पुनः बात करना भूल गया। इस बार क्रान्ति ने पहल की..

''आप अकेले रहते हैं, मेरा मतलब घर वाले कहीं गए हैं क्या?"

''घर यह है, घरवाला मैं। बस!".. रोहित ने खिलंदड़ेपन से जबाव दिया।

''ओह! सॉरी... मेरी बात से आपको ठेस तो नहीं पहुँची।"

''नहीं-नहीं, यह तो मेरी रोज की दिनचर्या में शामिल है।"

''बहुत देर लगा दी विजया जी ने, मैं देखती हूँ नीचे जाकर।"..पहलु बदलते हुए क्रान्ति बोली।

''आप बैठिए, आती ही होंगी।".. रोहित ने कहा।

क्रान्ति को बहुत अजीब लग रहा था, क्या बात करे। क्रान्ति अभी यही सोच रही थी कि रोहित ने पूछ लिया, ''आप इस शहर में नई आई हैं?"

''जी।"

''इसके पहले कहाँ जॉब था?"

''इलाहाबाद में।"

''यह शहर कैसा लगा?"

''शहर तो सभी एक से होते हैं, यह तो हम पर निर्भर करता है कि हम उससे कितना जुड़ पाते हैं।".. सपाट सा उत्तर दिया।

''सही कहा आपने, किन्तु अगर कोई अपना भी किसी शहर में रहता है तो वह शहर कुछ ज्यादा ही अच्छा लगता है।"

''इस बात का अनुभव मुझे नहीं है, शायद ऐसा होता होगा।" क्रान्ति ने अनभिज्ञता व्यक्त की ।

''आपके परिवार वाले तो होंगे?"

''जी नहीं, मैं अनाथ हूँ। अनाथ आश्रम ही मेरा घर परिवार रहा है।"

''ओह सॉरी, मैंने आपको दुखी कर दिया।"

''नहीं, इसमें दुख की क्या बात है, यह सब हमारे हाथ में नहीं होता।"

''आप में आक्रोश नहीं है, इन परिस्थितियों से।"

''नहीं, मैं सोचती हूँ, कई लोग परिवार के साथ रहकर भी अकेले हैं उनसे तो बेहतर स्थिति है मेरी।" क्रान्ति ने कहा।

इसी समय विजया आ गई, और तीनों बातों में मशगूल हो गये, एक दूसरे के फोन नम्बर ले लिए गए, जब दोनों जाने लगी तो रोहित ने पुनः आने को कहा।

दिन गुजरने लगे, मुलाकातें बढ़ीं, एक दूसरे को रोहित और क्रान्ति बहुत अच्छे से समझने लगे, फिर भी विजया को बहुत समय तक कोई इशारा नहीं मिला ।

''रोहित अब तुम्हें शादी कर लेनी चाहिए।".. एक दिन विजया ने रोहित के आगे शादी का प्रस्ताव रखा।

''किससे करुँ?"

''क्रान्ति से, ओर किससे।"

''क्या कह रही हो?"..हैरान हो बोला रोहित।

''पसंद नहीं है क्या?"

''ऐसी बात तो नहीं।"

''तो समझूँ, क्रान्ति पसंद है?"

''अरे विजया, क्रान्ति भी मुझे पसंद करती है या नहीं यह तो पता चले। एकतरफा पसंद कोई मायने नहीं रखती।".. बैचैन हो बोला रोहित।

''वह मैं पूछ लूँगी, तुम्हारे भरोसे नहीं रहना मुझे, समझे?"

प्रभास का सुझाव है कि क्रान्ति से भी पूछ लो, थोड़ा भी सकारात्मक पहलू नजर आता है तो पहल करने में कोई बुराई नहीं है, विजया प्रभास के प्रोत्साहन से क्रान्ति से भी पूछने के लिए तैयार हो गई।

''विजया! रोहित को पसंद करती हूँ, किन्तु यह नहीं जानती कि शादी करके ही इस पसंद को सही परिणति मिलेगी।".. क्रान्ति ने विजया से पूछा।

''साथ रहने व साथी बनाने में अगर दोनों को एतराज न हो तो शादी करना बेहतर होता है। यह दो समझदार जिन्दगियों की सही परिणीति मानी जाती है क्रान्ति।" विजया ने इस दार्शनिक बिन्दू को छू लिया।

विजया चाह रही है कि किसी भी तरह रोहित और क्रान्ति एक साथ रहने को राजी हो जाए, वह अपने दोस्त के दर्द को भी समझती है और क्रान्ति के जीवन के एकाकीपन को भी।

थोड़ा समय लगा और थोड़ी मेहनत, समझ को विकसित करने में, दोनों को तैयार कर विजया, प्रभास ने कोर्ट मैरिज करवा दी। छोटी सी पाटह्न भी रख ली। सभी प्रसन्न हैं।

विजया को भी रोहित के अकेलेपन की चिंता नहीं रही। एक सच्चे दोस्त को, पवित्र दोस्ती का जामा पहनाकर, परिधियों के तटबंधों को तोड़, विजया राहत महसूस कर रही है। प्रभास और उन्मुक्त हो गया है, नये उत्साह के माध्यम उपलब्ध होंगे, वही जीवन में रोचकता का संचार होगा और साथ ही दोस्तों की जमात में नया व प्यारा दोस्त क्रान्ति के रूप में शामिल भी हो गया है।

साहित्य समाज और संस्कृति

श्यामल बिहारी महतो

कहते हैं साहित्य समाज का दर्पण होता है। समाज में घटित घटनाओं का साहित्य पर सीधा-सीधा असर पड़ता है। कारण? समाज में घटित घटनाओं पर जब कोई लेखक कलम चलाता है तो हर बुद्धिजीवी उस पर चिंतन मनन करता है। वांछित-अवांछित पर अपनी कीमती राय मशविरा देता है। तब कलम के सिपाही उस पर लिख कर समाज को एक नई दिशा देने का काम करते हैं। वही साहित्य आज धीरे-धीरे हाशिये पर आ गया है। कारण समय के साथ साथ बहुत सारी स्थितियाँ बदलती जा रही हैं। विज्ञान और सूचना क्रान्ति के तेज आक्रमण से समाज का चेहरा भी बदला है। समाज से सामाजिकता का पतन लगातार जारी है। आपसी रिश्ते दरक रहे हैं या फिर कलंकित हो रहे हैं। ऐसी-ऐसी घटनाएँ दिन प्रतिदिन घट रही हैं जिसे स्वीकारने में समाज की सासें फूल रही है। विकृतियों ने समाज को पतन की ओर धकेल दिया है। समाज और सांस्कृतिक परम्परा को जितनी क्षति पिछले डेढ़ दो दशकों में हुई है, उससे कोई बच नहीं सका है और जब इतना सब कुछ घट रहा हो तो फिर यह कैसे संभव हो कि साहित्य और साहित्यकारों पर इसकी छाया न पड़े।

किसी भी समाज और संस्कृति के निर्माण में साहित्य की अहम भूमिका होती है, साहित्य और संस्कृति का वातावरण हमारे समाज को उन्नतशील बनाता है। एक जमाना था जब बुक-स्टालों पर धर्मयुग, सारिका, हंस, कथादेश, कहानीकार और कथन तथा वर्तमान साहित्य जैसी पत्रिकाएँ धड़ल्ले से बिकती थीं और पाठकों को अगले अंक की प्रतीक्षा रहती थी। जैसे प्रेमी, पत्रिका का नहीं अपनी प्रेमिका के आने का इंतजार करता हो। अब तो स्थिति एक दम से उलट है, आज साहित्यिक पत्रिकाओं की जगह अपराध और सेक्स पत्रिकाओं ने अपना कब्जा जमा लिया है। साहित्य की पुस्तकें तो बाजार में, बुक-स्टालों में मिलना ही बंद हो गयी हैं।

यह सत्य है कि बड़ी बड़ी पत्रिकाएँ भी बंद हो चुकी हैं। लेकिन यह भी एक सच है कि इतने संकटों के बावजूद भी लघु पत्रिकाओं ने हार नहीं मानी है और हर छोटे-बड़े शहर से निकल रही हैं जो एक सुखद आश्चर्य है। देश में हिन्दी की लघु पत्र-पत्रिकाओं का अभाव नहीं दिखता, पर यह भी सच है कि आर्थिक संसाधनों के अभाव में लघु पत्रिकाएँ भी पाठकों तक नहीं पहुँच पातीं। अच्छी पुस्तकों की स्थिति तो और भी सोचनीय है। प्रकाशक भी नहीं चाहते हैं कि पुस्तकें पाठकों तक पहुँचें। कीमत इतनी रख दी जाती है कि आम पाठक के खरीद से बाहर हो जाती है। परिणाम जो पुस्तकें पाठकों तक पहुँचनी चाहिए वह पुस्तकालयों में पहुँच जाती हैं जहाँ मोटी कमीशन का कारोबार चलता है। इसी बहाने कूड़ा-करकट और कचरा साहित्य भी ऐसी संस्थाओं में ठिकाने लगा दिया जाता है। हताश पुस्तक प्रेमी बाजारू पुस्तकों के जाल में जा फंसते हैं। इसका दुष्परिणाम सीधा हमारे समाज और संस्कृति पर पड़ता है। इस स्थिति में लघु पत्रिकाएँ गंभीर पाठकों के लिए निराशा में आशा की किरण लेकर उसके बीच आती हैं। कहते हैं अच्छी पुस्तकें व्यक्ति, समाज और देश की स्थिति को बदलने की शक्ति रखती हैं। फ्रांस की राज्य

क्रांति और सोवियत रूस की क्रांति इसके गवाह हैं। आज विज्ञान ने काफी प्रगति कर ली है लेकिन इससे कहीं समाजिक क्रांति हुई हो, ऐसा उदाहरण देखने को नहीं मिलता । वैसा लेखन भी अब सामने नहीं आ पा रहा है जिसको इस समाज से सरोकार हो, हमारे रोज़मर्रा के जीवन में बहुत-सी बातें अहम स्थान रखती हैं लेकिन उनमें पुस्तकों का कोई स्थान नहीं बचा है जो होना चाहिए था। पुस्तक सबसे उपेक्षित स्थिति में है। आज हम पुस्तकों एवं पत्र पत्रिकाओं को खरीद कर पढ़ना नहीं चाहते, आज के लेखक कवि भी सिर्फ अपनी रचनाओं को छपते देखना चाहते हैं पर जब पत्रिकाओं के आर्थिक सहयोग की बात हो तो साहूकार बन जाते हैं। रचना भी दूँ और पैसे भी? उनका सबसे बड़ा सवाल होता है। जो वाजिब तो लगता है पर व्यवहारिक नहीं। यही कारण है कि लेखकों से संवाद सूत्र जोड़ना अब गौण हो चुका है। इस कारण पुस्तक और पाठक के बीच की दूरी भी बढ़ती जा रही है । पुस्तकों का महंगा होना भी इसका एक महत्वपूर्ण कारण हो सकता है। ऐसे में लघु पत्रिकाएँ सेतु की तरह काम कर रही हैं। पत्रिकाएँ किसी हद तक पाठकों की रुचि को परिष्कृत करती रहती हैं जिनसे उसे समाजिक समरसता को समझने में सहायता मिलती है।

एक समय था जब पाठक और लेखन के बीच बराबर संवाद बना रहता था। लेखक पाठक के पत्रों को अपनी रचना का आधार मानता था। वहीं पाठक लेखक से सीधे अपने मन की बात कह समय तथा समाज को समझने का उपक्रम करता था। आज स्थिति उलट हो गई है। आज साहित्य में संवादहीनता की स्थिति उत्पन्न हो गई है और इसके लिए प्रकाशक और किसी हद तक स्वयं लेखक भी जिम्मेदार है। क्योंकि आज पुस्तकें बहुत महंगी और पाठकों की क्रय शक्ति से बाहर हो गई हैं, वर्तमान में अधिकतर पुस्तकें पाठकों के लिए नहीं बल्कि पुस्तकालयों को ध्यान में रखकर लिखा और छपा करती हैं। अत: प्रकाशक ने अपने फायदे के लिए पुस्तकों को पाठकों से दूर कर दिया है, ऊपर से साहित्य में अश्लीलता बढ़ती जा रही है जो सस्ता प्रचार पाने का हथकंडा मात्र है, जबकि स्वस्थ्य साहित्य ही अंतत: साहित्य में और समाज में अपनी स्थायी जगह बना पाता है और आगे भी यह रिश्ता कायम रहेगा। इस उम्मीद के साथ.....!

बोकारो, झारखंड
फोन नं 6204131994

आशा शैली के दोहों का भावपक्षीय सौन्दर्य

-श्रीमती हीरा अन्ना
राजकीय महाविद्यालय खटीमा

विख्यात साहित्यकार आशा शैली एक ऐसा व्यक्तित्व है जो संघर्ष तथा चुनौतियों के साथ हर दम खड़ा रहता है। वे कर्मठ हैं, गम्भीर हैं तो धीरज से युक्त भी। संघर्ष से रत रहकर भी वे अपने कार्य व कर्तव्य से विमुख नहीं होती। स्वभाव से यायावार बोलों में संयमित, श्वेत वर्ण आशा जी न केवल सृजन करती हैं, बल्कि अन्य रचनाकारों को भी प्रेरित करती हैं।

आशा जी के साहित्य में कहानी, लघु कथा, उपन्यास, लेख, सस्मंरण, अनुवाद, समीक्षा, रिपोर्ताज, बाल साहित्य, कविता, ग़ज़ल, गीत तथा दोहे शामिल हैं।

दोहा हिन्दी का ऐसा छन्द है जिसमें दो पंक्तियाँ तथा चार चरण होते हैं। दोहा छन्द के विषम चरणों में 13-13 तथा सम चरणों में 11-11 मात्राएँ होती हैं। दोहे लिखने की परम्परा अत्यन्त प्राचीन है। आशा शैली ने दोहे लिख कर इसी परम्परा को आगे बढ़ाया है। उन्होंने अनेक दोहे लिखे हैं जो भिन्न-भिन्न पत्रिकाओं तथा पुस्तकों में प्रकाशित हुए हैं। सन् 2020 में उन्होंने अपना पहला दोहा संग्रह प्रकाशित किया तथा कुछ अन्य पुस्तकों में उनके दोहे संकलित भी हैं।

1-'राम नाम का मनका'-आशा शैली का यह दोहा संग्रह 2020 में प्रकाशित हुआ। इसमें उनके राम नामी 108 दोहे हैं। यह पुस्तक 'आरती प्रकाशन' द्वारा प्रकाशित की गई है। इस दोहे संग्रह के प्रारम्भ में आशा शैली जी ने अपने गुरू को नमन किया है। 'वाणी वन्दना' में गणेश, सरस्वती की आराधना है। इसके पश्चात् समस्त दोहों में राम भक्ति है। कहीं-कहीं कृष्ण, लक्ष्मण व सीता का भी गुणगान है। अन्तिम दाहों में पवन पुत्र हनुमान की वन्दना है।

2-पर्यावरणीय दोहे-आशा शैली के 50 पर्यावरणीय से सम्बन्धित दोहे 'मेरी साँसें, तेरा जीवन' पुस्तक में संकलित हैं। इसकी सम्पादक अनीता भारद्वाज हैं। यह पुस्तक सर्वप्रथम 2017 में प्रकाशित हुई थी। यह अर्णव कलश एसोसिएशन द्वारा प्रस्तुत दोहा साँझा संग्रह है। इसमें लगभग 23 दोहाकारों के दोहे संकलित हैं। रोचक बात यह है कि इस पुस्तक में सभी कवियों के प्रत्येक दोहे पर्यावरण से ही सम्बन्धित है।

दोहों का काव्यगत सौन्दर्यः-कविता तथा गीत की भाँति दोहों का काव्यगत सौन्दर्य उसके भावपक्ष तथा कलापक्ष के सौन्दर्य से निर्धारित होता है। अतः दोहों के काव्यगत सौन्दर्य को हम निम्नलिखित दो भागों में बाँट सकते हैं।

दोहों का भावपक्षीय सौन्दर्यः-

1:-गेयता का निर्वाहः-जो गाया जा सके वह गेय होता है। सामान्यतयाः कविताओं मे गेयता का गुण पाया जाता है। आशा शैली के समस्त दोहे दो पक्तियों में लिखे गए हैं। इनकी प्रमुख विशेषता यह है कि ये लय के साथ गाए जा सकते हैं। इसके साथ-साथ दोहे कर्णप्रिय भी हैं।

''सहज और निष्काम जो, गहे राम की टेक।
उसके लाखों जन्म के, कर्म जगे हैं नेक।।''

.....

''जीवन हर पल पर्व हो, करो नाम से नेह।
पावन तन मन हो रहे, पावन होता गेह।।''

आशा शैली के दोहे गुरू नमन से सम्बन्धित हों अथवा गणेश नमन से, भगवान श्रीराम की भक्ति से सम्बन्धित हों अथवा हनुमान जी के वन्दन से सभी में गेयता का

निर्वाह है। यही नहीं उनके पर्यावरण से सम्बन्धित सभी दोहे भी लय के साथ गाए जा सकते हैं।

''कैसी आशा पुत्र से, कैसा है अभिमान।
सुत से अच्छे वृक्ष हैं, देते जीवनदान।।''

.....

''गंगा धरती सींचती, सब की पालनहार।
पर अब है दूषित हुई, करती हाहाकार।।''

2-गुरु की महिमा:-जीवन में गुरु की महिमा अनन्त है। गुरू शिष्य को अनन्त दृष्टि प्रदान करता है। वह अपने शिष्य को अनन्त व असीम ब्रह्म का साक्षत्कार कराने में समर्थ होता है। वह अपने शिष्य को ज्ञान का ऐसा दीपक प्रदान करता है, जिससे वह ठीक मार्ग पर चल सके। गुरु को ईश्वर से भी श्रेष्ठ माना है। गुरु की कृपा से जीवन धन्य हो जाता हौ, संध्या सुहावनी हो जाती है। काव्य धनवान हो जाता है। कबीर का कथन है-

''हरि रूठे गुरु ठौर है, गुरु रूठे नहिं ठौर।''

आशा शैली ने भी अपनी पुस्तक 'राम नाम का मनका' अपने मार्गदर्शक, परम श्रद्धेय गुरुवर श्री नारायण दत्त श्रीमाली को समर्पित की है। गुरु की कृपा से ही उनकी पुस्तक पूर्ण हो पाई है।

वे गुरु को सदैव प्रणाम करने को कहती हैं क्योंकि गुरु ही ऐसा व्यक्तित्व है, जो हमारे जन्मों का गहन अन्धकार दूर करते हैं। भगवान श्रीराम भी गुरु का महत्व बताते हैं। गुरु को नमन करते हुए आशा शैली जी कहती हैं-

''मोह तिमिर का काटती, गुरू की कृपा अपार।
गुरु तो आँखें खोलते, ज्ञान दीप उजियार।।''

.....

''जिसने मुझको दे दिया, ज्ञान दीप उजियार।
उस गुरु के श्री चरण में, नत हूँ बारम्बार।।''

3:-विभिन्न देवताओं का गुणगान-आशा शैली ने अपनी पुस्तक 'राम नाम मनका' के अधिकतर दोहों में भगवान श्रीराम की भरपूर वन्दना की है। वे जानती हैं कि भगवान राम सभी का मंगल व शुभ करते हैं। साथ ही वे अपनी लेखनी को सफल करने के लिए भगवान गणेश से भी आशीर्वाद लेती हैं।

''राम सभी का शुभ करें, मंगल करें हमेश।
मेरी लेखनी सफल हो, मंगल करें गणेश।।''

आशा शैली अपने दोहों में माँ सरस्वती की अपने जीवन पर हुई कृपा से धन्य हैं। जब से हंसवाहिनी ने उन पर अपना हाथ धरा है वे अनाथ से सनाथ हो गई हैं। वे ऐसी देवी हैं, जिनकी वाणी से नित्य प्रतिदिन शब्दों के फूल बरसते हैं। माँ सरस्वती को सम्बोधित करते हुए वे कहती हैं:-

''हंसवाहिनी ने किया, जिस जन पर उपकार।
झोली भर मिलते उसे, प्रेम पुष्प उपहार।।''

वे प्रभु राम के साथ-साथ लक्ष्मण व सीता माँ की भी वन्दना करती हैं।

''सीय चरण वंदन करूँ, लखन सहित रघुनाथ।
दुख हो चाहे सुख सखे, रहते मेरे साथ।।''

वे राम तथा कृष्ण को एक ही छवि के दो रूप मानती हैं।

''इक छवि के दो भाग हैं, एक कृष्ण इक राम।
पल में कर सायक धरें, पल में मुरली थाम।।''

वे मानती हैं कि जब माँ अम्बे तथा श्री राम प्रभु दोनों का आशीर्वाद मिल जाता है तो मन में सभी पाप दूर हो जाते हैं।

''ममता अम्बे मात की, राम का आशीर्वाद।
दोनों जब मिल जाऐं तो, मन से मिले विषाद।।''

आशा शैली के अनुसार जब राम भक्त हनुमान प्रसन्न हो जाते हैं तो राम स्वंय अपने आप ही प्रसन्न हो जाते हैं। उन्हें तो बजरंगी ने मालामाल कर दिया है। बजरंगी राम के प्रिय हैं। वे बजरंगी से सन्त जनों के प्राण उबारने को कहती हैं। यदि बजरंगी उनके अंग-संग रहें तों उनकी दया का क्या कहना? वे कहती हैं-

''बजरंगी की बात निराली,
पल में लंका दहन कर डाली।
बजरंगी भक्तों के प्यारे,
रक्षा करिये राम दुलारे।
बजरंगी हैं अवघड़ दानी,
बजरंगी की अजब कहानी।''

4:-सगुणोपासक राम-हिन्दी साहित्य में भक्ति धारा के अन्तगर्त भक्ति के दो रूप मिलते हैं। सगुण भक्ति तथा निर्गुण भक्ति। सगुण भक्ति वह भक्ति है जिसमें ईश्वर का रूप, रंग और आकार होता है। साकार भक्ति में मूर्ति द्वारा ईश्वर की पूजा होती है। सीधा-सादा मतलब होता है कि हम परमात्मा को एक आकार में देखते हैं। जबकि निर्गुण भक्ति के अन्तर्गत ईश्वर का रूप, रंग, आकार तथा मूर्ति पूजा मान्य नहीं होती। इसमें हम ईश्वर को एक अस्तित्व के तौर पर सर्वत्र विद्यमान सत्ता के रूप में देखते हैं।

आशा जी सगुण भक्ति मार्ग की अनुयायी हैं। उनके राम कबीर के निर्गुण राम नहीं हैं। बल्कि दशरथ पुत्र राम हैं। वे अत्यन्त सुन्दर, गुणी, धैर्यवान हैं। वे धनुष धारण करते हैं। आशा जी कहती हैं-

''सुप्रभात श्रीराम कह, नवे सभी को साथ।
पल-पल संग रहते सखे, धनुधारी रघुनाथ।।''

5:-राम नाम स्मरण पर बल:-वैसे तो सभी सगुण-निर्गुण भक्त कवि परमात्मा से भी अधिक परमात्मा के नाम स्मरण का महत्व बताते हैं। आशा शैली ऐसी सगुण भक्त कवयित्री हैं जो अपन दोहों में राम नाम स्मरण को अत्यधिक महत्व देती हैं। वे हृदय से मनुष्य को राम नाम स्मरण करने को कहती हैं। हरि स्मरण का महत्व बताते हुए वे कहती हैं-

''करिए जग के काम सब, प्रथम सुमिर हरि नाम।
जग में आना सफल हो, जब सुमिरो श्रीराम।।''

''धन्य-धन्य वह देह जित, करता प्रेम निवास।
पल छिन रामहि सुमिरते, आवे-जावे श्वास।।''

वे कहती हैं उनके रोम-रोम में बस राम का ही नाम रम रहा है। जब भी उनका मन कहीं इधर-उधर भटकने लगता है तो, राम नाम का स्मरण उनका हाथ थाम लेता है तथा वे भटकने से बच जाती हैं। उनके कण-कण में राम बसे हैं। वैसे तो कहा जाता है कि अयोध्या में राम का निवास है। परन्तु आशा शैली जी की अयोध्या तो वहीं है जहाँ उन्हें श्रीराम प्रभु का स्मरण हो आता है।

वे प्रात: उठकर राम नाम स्मरण पर बल देती हैं। सहज सब निष्काम भाव से राम नाम जपने को कहती हैं। वे जिस दिन श्रीराम के नाम का उच्चारण नहीं करती, वह दिन मानों व्यर्थ चला जाता है।

''जेहि दिन राम न उच्चरे, सो दिन बिरथा जान।
साँस-साँस में रम रहे, मेरे राम सुजान।।''

प्रभु राम के स्मरण से व्यक्ति का इस भवसागर से बेड़ा पार हो जाता है। वास्तव में राम नाम का जाप ही सम्पूर्ण सृष्टि का मूल है।

6-सत्संगति का महत्व:-सत्संगति का अर्थ है-अच्छे आदमियों की संगति। गुणी जनों का साथ। अच्छे मनुष्य का अर्थ है-वे व्यक्ति जिनका आचरण अच्छा होता है। जो सदैव श्रेष्ठ गुणों को धारण करते है। सत्य का पालन करते हैं। परोपकारी हैं। अच्छे चरित्र के सारे गुण उनमें विद्यमान हैं। ऐसे अच्छे व्यक्तियों के साथ रहना, उनकी बातें सुनना, उनकी पुस्तकें पढ़ना, सत्संगति के अन्तर्गत आता है।

सत्संगति से मनुष्य में मानवीय गुण उत्पन्न होते हैं। उसका जीवन सार्थक बनता है। सत्संगति में ज्ञानहीन मनुष्य को भी विद्वान बनाने की सामर्थ्य होती है। यह मनुष्य के व्यक्तित्व को निखारती है। उसमें सद्गुणों का संचार करती है। अच्छे आदमियों के सम्पर्क से हम में गुणों का समावेश होता चला जाता है।

महात्मा कबीरदास का कथन है-

''कबिरा संगति साधु की, हरे और की ब्याधि।

संगत बुरी असाधु की, आठों पहर उपाधि।।''

आशा शैली भी अपने दोहों में संत व्यक्तित्व की संगत अपनाने पर बल देती है। क्योंकि अच्छी संगत जहाँ व्यक्ति को गुणों से भर देती है। वहीं बुरी संगति हमें धीरे-धीरे घुन की तरह खा जाती है। अच्छी संगति से मन में ज्ञान पैदा होता है। अच्छी संगति में रहने वाला व्यक्ति सदैव राम नाम स्मरण करता है। आशा जी कहती है-

''संग संत का राखिए, डर में उपजे ज्ञान।
राम नाम सुमिरन करें, पल-पल संत सुजान।।''

7:-नश्वर संसार:-आशा शैली अपने दाहों में इस जगत को नश्वर मानती है। इस छोटे से संसार में राम नाम का ही अनन्त विस्तार है। वे कहती हैं कि हे मनुष्य! तू भली भाँति सोच-विचार कर ले। तू इस संसार में एक कण के भी बराबर नहीं है। आशा जी कहती हैं-

''प्रात: उठ श्री राम को, सिमर लेहु रे मीत।
यह जग सपना बिनसिहै, ज्यों बालू की भीत।।''

8:-दास्य भक्ति:-भक्ति शब्द की व्युत्पत्ति 'भज्' धातु से हुई है। जिसका अर्थ सेवा करना या भजना है। अर्थात् श्रद्धा और प्रेमपूर्वक इष्ट देवता के प्रति आसक्ति। व्यास ने पूजा में अनुराग को भक्ति कहा है। भक्ति के नौ भेद है। जिसमें श्रवण, भजन-कीर्तन, नाम जप, स्तरण, मन्त्र जप, पाद सेवन, अर्चन, वंदन, दास्य, सख्य, पूजा आरती, प्रार्थना, सत्संग इत्यादि है।

आशा शैली अपने दोहों में स्वंय को भागवान श्रीराम का दास कहती है। अर्थात् राम के प्रति उनकी भक्ति दास्य भक्ति के अन्तर्गत आती है। इसमें उपासक अपने उपास्य देवता को स्वामी और अपने आपको उसका दास समझती है। वे अपने आपको भगवान् श्रीराम के समक्ष अज्ञानी व भिक्षुक मानती है। वे कहती है।-

''हम हैं भिक्षुक राम के, सजा राम दरबार।
आँचल में भर लो सखे, जो दे राम उदार।।''

9:-माधुर्य भक्ति:-वात्सल्य भाव से भी आगे है- वह है माधुर्य भाव। माधुर्य भक्ति के अन्तर्गत भक्त ईश्वर की भक्ति में लीन हो जाता है। वह अपने आराध्य से प्रेम करने लगता है। भक्त जब अपने आराध्य से कान्त भाव से प्रेम करने लगे तो ऐसी भक्ति माधुर्य भक्ति कहलाती है। आशा शैली अपने दोहों में भगवान् श्रीराम की भक्ति में लीन है तथा उन्हें अपना सर्वस्व मानती है।

''राम विमुख मन बाबरा, जगत रहा भरमाय।
प्रेम बने आधार जब, राम बसें मन आय।।''

माधुर्य भक्ति में हम भगवान् को अपना राजा, स्वामी, सखा, बेटा तथा प्रियतम मानकर प्रेम कर सकते है। सभी रसों का आनंद ले सकते हैं। आशा जी कहती हैं-

''राम हमारे बन गए, सखा सनेही मीत।
बसें हृदय में यूँ सखा, जैसे मधुरिम गीत।।''

कवयित्री यह भी कहती है कि भगवान् राम से जब प्रेम हो जाता है तो मानो जीवन एक मधुर गीत बन जाता है। श्वासों में सरगम बसता है तथा पूरा ब्रह्माण्ड मानो संगीत बन जाता है।

''प्रीत राम संग जब लगे, जीवन बनता गीत।
साँसों में सरगम बसे, सकल ब्रह्म संगीत।।

10:-राम नाम जपना पहचान देता है-आशा शैली कहती हैं कि यदि मैं भगवान श्रीराम की आराधना करती हूँ, तो इससे मेरा मान-सम्मान बढ़ता है। अत: कहा जा सकता है कि उनके दोहों के लेखन में प्राचीन व नवीन परिपाटी का सुन्दर समन्वय है।

11:-राम भक्ति ही जीवन का सार-'राम नाम मनका' पुस्तक में संकलित सभी राम नामी 108 दोहों में आशा शैली राम भक्ति को ही सभी तत्वों का सार मानती हैं।